खेल खतम पैसा हज़म

राष्ट्रमंडल खेल के निर्माण कार्य में मजदूरों के शोषण की कहानी पर एक रिपोर्ट

पीपॅल्स यूनियन फॉर डैमोक्रैटिक राइट्स, दिल्ली

जनवरी 2011

अनुक्रम

प्रस्तावना 03

1. उच्च न्यायालय में दाखिल जनहित याचिका 04

उच्च न्यायालय द्वारा 'मॉनिटरिंग कमिटी' का गठन' 05

मॉनिटरिंग कमिटी का कामकाज 06

मॉनिटरिंग कमिटी की रिपोर्ट 09

2. न्यायालय की कार्यवाही 17

3. खेलों के शुरू होने तक की ज़मीनी हकीकत पर नज़र 19

4. श्रम कानूनों का क्रियान्वन असंभव क्यों है 28

निष्कर्ष 32

तालिकाएं और बॉक्स

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की अवमानना 05

मॉनिटरिंग कमिटी द्वारा विभिन्न कार्य क्षेत्रों के दौरों का विवरण 07

वैधानिक न्यूनतम वेतन 10

उदासीनता और गैर–ज़िम्मेदारी का उदाहरण 15

मज़दूरों की संख्या को लेकर अनिश्चितता 21

कितनी दुर्घटनाएं और कितनी मौतें 23

दिल्ली लीगल सर्विस अथोरिटी की रिपोर्ट 25

इरोज़ ग्रुप में मज़दूरों का शोषण 27

भ्रष्टाचार का नमूना और पैसों का खेल 29

शब्द–संक्षेप

बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट – द बिल्डिंग एंड अदर कन्सट्रक्शन वर्कर्स (रेगुलेशन ऑफ इम्पलयॉमेंट एंड कंडीशन्स ऑफ सर्विस) ऐक्ट, 1996

बीओसीडब्ल्यू रूल्स – दिल्ली बिल्डिंग एंड अदर कन्सट्रक्शन वर्कर्स (रेगुलेशन ऑफ इम्पलयॉमेंट एंड कंडीशन्स ऑफ सर्विस) रूल्स, 2002

सीएजी – कम्पट्रोलर एण्ड ऑडिटर जनरल ऑफ इंडिया

सीपीडब्ल्यूडी – सैन्ट्रल पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट

सीडब्ल्यू ऐक्ट – द कॉन्ट्रेक्ट वर्कर्स (प्रोहिबिशन एंड रेग्युलेशन) ऐक्ट, 1970

सीडब्ल्यूजी–सीडब्ल्यूसी – कॉमनवेल्थ गेम्स–सिटीजन फॉर वर्कर्स, वुमेन एंड चिल्ड्रन

डीडीए – देलही डवलपमेंट अथॉरिटी/दिल्ली विकास प्राधिकरण

डीजी – इंस्पैक्शन महानिदेशक

डीआईएएल – दिल्ली इंटरनेशनल एयरपोर्ट लिमिटेड

डीएलएसए – दिल्ली लीगल सर्विस अथोरिटी

डीएमआरसी – दिल्ली मैट्रो रेल कॉरपोरेशन लिमिटेड

जीएनसीटी दिल्ली – राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली की सरकार

आईएमडब्ल्यू ऐक्ट – द इंटरस्टेट माइग्रेंट वर्कमैन (रेगुलेशन ऑफ इम्पलॉयमेंट एंड कंडीशन ऑफ सर्विस) ऐक्ट, 1979

एमसी रिपोर्ट – दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा गठित मॉनिटरिंग कमिटी की रिपोर्ट

एमसीडी – म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन ऑफ दिल्ली

एमडब्ल्यू ऐक्ट – द मिनिमम वेजेस ऐक्ट, 1948

एनडीएमसी – नई दिल्ली म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन

पीपीपी – पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप

पीयूडीआर – पीपॅल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स

आरटीआई – सूचना का अधिकार कानून, 2005

एसएआई – स्पोर्ट्स अथॉरिटी ऑफ इंडिया/भारतीय खेल प्राधिकरण

वैलफेयर बोर्ड – दिल्ली बिल्डिंग एंड अदर कंस्ट्रक्शन वर्कर्स वैलफेयर बोर्ड

डब्ल्यूसी ऐक्ट – द वर्कमैन्स कंपनसेशन ऐक्ट, 1923

– 27 जुलाई 2010 को राज्य श्रम मंत्री हरीश रावत ने राज्य सभा में स्वीकारा कि राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण के दौरान 42 मज़दूरों की मौत हुई थी।

– यह भी पता चला है कि खेलों से कुछ महीने पहले समय पर काम खतम करने की अफरा तफरी में बच्चों से भी निर्माण का काम करवाया गया। 26 जुलाई 2010 को अखबारों में सफदरजंग हवाई अड्डा निर्माण स्थल पर 4 मज़दूरों के मारे जाने की खबर छपी जबकि वे रात के समय में काम करते हुए एक तेज़ी से भागती हुई कार के नीचे आ गए। मारे जाने वाले मज़दूरों में एक 14 साल का लड़का भी था।

प्रस्तावना

दिल्ली में 3–14 अक्टूबर 2010 के बीच हुए राष्ट्रमंडल खेलों के लिए पिछले कुछ सालों से विभिन्न भागों में बहुत बड़े पैमाने पर निर्माण कार्य चल रहा था। पीपॅल्स यूनियन फॉर डैमोक्रैटिक राइट्स (पीयूडीआर) ने दो साल पहले राष्ट्रमंडल खेल गाँव में मज़दूरों के काम के हालात की जाँच करने की कोशिश की थी। निर्माण–स्थलों पर जाने के लिए हमने डीडीए के अधिकारियों से लेकर केन्द्रीय श्रम आयुक्त तक से इजाज़त लेने की कोशिश की, लेकिन हमें वहाँ जाने की इजाज़त नहीं दी गई। किसी तरह पीयूडीआर पूर्वी दिल्ली में अक्षरधाम मंदिर के नज़दीक यमुना के पास स्थित राष्ट्रमंडल खेलों के एक प्रमुख निर्माण स्थल, खेल गाँव में अपना जाँच कार्य करने में सफल रहा और 24 अप्रैल 2009 को हमने इस जाँच के आधार पर निर्माण स्थल पर बड़े पैमाने पर हो रहे श्रम कानूनों के उल्लंघन के बारे में अपनी रिपोर्ट जारी की। हमने अपनी यह रिपोर्ट दिल्ली सरकार और केन्द्र सरकार के श्रम विभागों और कॉमनवेल्थ खेलों के निर्माण कार्य से जुड़ी दूसरी राज्य एजेंसियों के पास भेजी।

2 मार्च 2008 को पीयूडीआर ने केन्द्रीय श्रम आयुक्त को एक चिट्ठी लिखी थी, जिसके जवाब में उन्होंने यह स्वीकार किया था कि राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों पर श्रम कानूनों का उल्लंघन किया जा रहा है, पर साथ ही कहा कि ऐसे मामले इक्का–दुक्का ही हैं। निर्माण कार्यों में शामिल दूसरी एजेंसियों ने सूचना के अधिकार कानून (आरटीआई) के तहत पूछे गए हमारे सवालों के जवाब में यही बताया कि उन्हें श्रम या दूसरे कानूनों के उल्लंघन की कोई जानकारी नहीं है।दूसरी ओर कई अन्य संगठनों द्वारा जारी की गई रिपोर्टों से भी यह बार–बार उजागर हुआ कि खेलों से संबंधित अन्य निर्माण स्थलों में भी श्रम कानूनों का बड़े स्तर पर उल्लंघन किया जा रहा है। इन संगठनों ने भी दिल्ली के उप–राज्यपाल, मुख्यमंत्री, केन्द्रीय श्रम मंत्रालय, केन्द्र और राज्य के श्रम विभाग, दिल्ली के निर्माण श्रमिक वैलफेयर बोर्ड और भारत सरकार के युवा और खेल मामलों के मंत्रालय का ध्यान इन मुद्दों की ओर दिलाया। लेकिन इन कोशिशों से कोई भी नतीजा सामने नहीं आया।

आखिरकार, राज्य का ध्यान उसके संवैधानिक और कानूनी दायित्वों की ओर दिलाने के लिए पीयूडीआर ने न्यायपालिका का दरवाज़ा खटखटाने का फैसला किया। हमने 20 जनवरी 2010 को निर्माण मज़दूर पंचायत संगम और कॉमन कॉज़ नामक दो संस्थाओं के साथ मिलकर दिल्ली उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर की। 'निर्माण मज़दूर पंचायत संगम' *नेशनल कैम्पेन कमिटी फॉर सेन्ट्रल लेजिस्लेशन ऑन कॉन्स्ट्रक्शन लेबर* (एनसीसी–सीएल) का एक घटक है और 'कॉमन कॉज़' दिल्ली में विभिन्न मुद्दों पर काम करने वाली रजिस्टर्ड संस्था है। प्रस्तुत रिपोर्ट में हमने दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा इस याचिका को स्वीकार कर लिए जाने के बाद हुए घटनाक्रमों और अपने अनुभवों को संक्षेप में पेश किया है। जहाँ यह एक राहत देने वाली बात रही है कि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त कमिटी ने इस तथ्य की पुष्टि की कि राष्ट्रमंडल खेलों के लिए हो रहे निर्माण कार्य में श्रम कानूनों का काफी ज़्यादा उल्लंघन हो रहा है, वहीं दूसरे स्तर पर इस पूरे अनुभव ने कानूनी प्रक्रिया की सीमाओं को भी उजागर किया।

उच्च न्यायालय में यह साफ हो जाने के बावजूद कि निर्माण स्थलों पर श्रम कानूनों को पूरी तरह से ताक पर रख दिया गया है, ज़मीन पर कुछ नहीं बदला। अधिकांश मज़दूर न्यूनतम मज़दूरी से कहीं कम पर काम करते रहे और न तो निर्माण स्थल पर उनकी सुरक्षा व्यस्था में कोई सुधार आया और न ही रहने के हालातों में। खेल शुरू होने से पहले अधिकांश मज़दूर या तो अपने गाँवों में वापस चले गए या भेज दिए गए या कार्यस्थल से दूर हटा दिए गए। इसलिए आज यह असंभव हो गया है कि इन हज़ारों मज़दूरों के साथ सालों साल हुए अन्याय की भरपाई हो सके। ये तथ्य हमें उन कठोर वास्तविकताओं की याद दिलाते हैं जिनके कारण अन्याय के खिलाफ लड़ाई लंबी और दुरूह बन गई है। आज हर तरफ राष्ट्रमंडल खेलों में हुए भ्रष्टाचार का मुद्दा चर्चा में है। जिन खेलों में हज़ारों करोड़ रूपये बहा दिए गए उनसे संबंधित इस मुद्दे को उठाया जाना, सही जाँच–पड़ताल और दोषियों के खिलाफ कार्यवाही महत्वपूर्ण है। पर इन सब के बीच सरकारी एजेंसियों, निजी निर्माण कंपनियों और ठेकेदारों द्वारा हज़ारों मज़दूरों को उनके कानूनी और संवैधानिक अधिकारों से वंचित करने के अपराध के मुद्दे का प्रचार माध्यमों और आम लोगों के बीच से पूरी तरह से गायब हो जाना बेहद दुखद है। प्रस्तुत रिपोर्ट इसी मुद्दे को जीवित रखने का एक प्रयास है।

1. उच्च न्यायालय में दाखिल जनहित याचिका

पीयूडीआर ने जनवरी 2010 में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अंतर्गत राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों पर मज़दूरों के अधिकारों के उल्लंघन के खिलाफ दिल्ली उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर की थी। 27 जनवरी 2010 को दिल्ली उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री ए. पी. शाह और माननीय न्यायाधीश श्री राजीव सहाय इन्डलॉ की खंडपीठ ने इस जनहित याचिका (डब्ल्यूपीसी 524/2010) को सुनवाई के लिए स्वीकार कर लिया।

याचिका को स्वीकार करते हुए 27 जनवरी को न्यायालय ने भारत की केन्द्र सरकार, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली की सरकार (जीएनसीटी दिल्ली), भारतीय खेल प्राधिकरण (एसएआई), दिल्ली विकास प्राधिकरण (डीडीए), डायरेक्टर जनरल ऑफ इंस्पेक्शन, सेन्ट्रल पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट (सीपीडब्ल्यूडी), नई दिल्ली म्युनिसिपल कॉरपोरेशन (एनडीएमसी), म्युनिसिपल कॉरपोरेशन ऑफ दिल्ली (एमसीडी), दिल्ली बिल्डिंग एंड अदर कंस्ट्रक्शन वर्कर्स वैलफेयर बोर्ड, दिल्ली इंटरनेशनल एयरपोर्ट लिमिटेड (डीआईएएल), दिल्ली मैट्रो रेल कॉरपोरेशन लिमिटेड (डीएमआरसी) और इन्सपेक्शन ऑफ बिल्डिंग एंड कंस्ट्रक्शन ऑफ दिल्ली के चीफ इन्सपैक्टर को नोटिस जारी किए।

इस जनहित याचिका में राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों पर कई श्रम कानूनों, जैसे *बिल्डिंग एंड अदर कन्सट्रक्शन वर्कर्स (रेगुलेशन ऑफ इम्पलयॉमेंट एंड कंडीशन्स ऑफ सर्विस) ऐक्ट 1996, मिनिमम वेजेस ऐक्ट 1948, इंटरस्टेट माइग्रेंट वर्कमैन (रेगुलेशन ऑफ इम्पलॉयमेंट एंड कंडीशन ऑफ सर्विस) ऐक्ट 1979 और द कॉन्ट्रेक्ट वर्कर्स (प्रोहिबिशन एंड रेग्युलेशन) ऐक्ट 1970* के प्रावधानों के उल्लंघन के बारे में बताया गया था।

यह याचिका कुछ रिपोर्टों पर आधारित थी – (1) पीयूडीआर की रिपोर्ट, (2) राष्ट्रमंडल खेलगाँव निर्माण स्थल, कुछ मैट्रो निर्माण स्थलों, अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा निर्माण स्थल से संबंधित कई अन्य रिपोर्ट (3) 'कॉमनवेल्थ गेम्स–सिटीजन फॉर वर्कर्स, वुमेन एंड चिल्ड्रेन (सीडब्ल्यूजी–सीडब्ल्यूसी) द्वारा राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों पर मज़दूरों की स्थिति के बारे में 13 अक्टूबर 2009 को की गई जन सुनवाई की रिपोर्ट और (4) *बिल्डिंग एंड अदर कंस्ट्रक्शन वर्कर्स (रेग्युलेशन ऑफ इम्लॉयमेंट एंड कंडीशन्स ऑफ सर्विस)* (यहाँ के बाद से बीओसीडब्ल्यू) *ऐक्ट 1996*, और 2002 में अधिसूचित हुए इसके नियमों के आधार पर बने 'दिल्ली वैलफेयर बोर्ड' के काम न करने से संबंधित रिपोर्ट। इन सभी रिपोर्टों में यह बात साफ़ तौर पर उभरकर सामने आयी थी कि राष्ट्रमंडल खेल के निर्माण–स्थलों पर श्रम कानूनों का पूरी तरह से उल्लंघन हो रहा था। यहाँ मज़दूरों की सुरक्षा पर ध्यान नहीं दिया जा रहा था तथा उनके रहन–सहन की स्थिति भी बहुत ही खराब थी।

याचिका में न्यायालय से यह प्रार्थना की गई थी कि वह एक स्वंतत्र कमिटी का गठन करे जो राष्ट्रमंडल खेलों से संबंधित विभिन्न निर्माण स्थलों का दौरा करे, वहाँ मज़दूरों से बात करे और याचिका में की गई शिकायतों के संदर्भ में एक रिपोर्ट तैयार करे। याचिका में न्यायालय से यह भी अनुरोध किया गया था कि वह प्रतिवादियों को निम्नलिखित बातें सुनिश्चित करने का निर्देश दे –

1. बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के प्रावधानों और इसके अंतर्गत निर्माण मज़दूरों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए बने नियमों का पालन सुनिश्चित हो।

2. राष्ट्रमंडल खेलों से संबंधित निर्माण कार्यों में लगे सभी मज़दूरों को पहचान पत्र, जनश्री बीमा योजना/राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के अंतर्गत बीमा सुविधा, न्यूनतम मज़दूरी, ओवरटाइम के लिए दुगनी मज़दूरी, वेज स्लिप, साप्ताहिक छुट्टी, अच्छी मेडिकल सुविधाएँ, दुर्घटना होने पर मुआवज़े की व्यवस्था, पीने के लिए साफ पानी और शौचालय की सुविधाएँ दी जाएं।

3. राष्ट्रमंडल खेलों से संबंधित निर्माण में लगे सभी मज़दूरों का दो हफ्ते के भीतर बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के अंतर्गत बने वैलफेयर बोर्ड में रजिस्ट्रेशन (पंजीकरण) हो और मज़दूरों को इससे मिलने वाले फायदे काम शुरू होने की तारीख से दिये जाएं।

4. मज़दूरों के क्वार्टरों को सही तरह से बनाया जाए, उनमें सुरक्षित दरवाज़ों, बिजली की आपूर्ति और पर्याप्त

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की अवमानना

राष्ट्रमंडल खेलों में मज़दूरों के अधिकारों के उल्लंघन के संबंध में पीयूडीआर की पिछली रिपोर्ट जारी होने के बाद डीडीए के प्रवक्ता ने कहा था कि समय–समय पर उनके इंजीनियर राष्ट्रमंडल खेल गाँव निर्माण स्थल में निरीक्षण करते रहते हैं, लेकिन उन्हें वहाँ काम करने वाले मज़दूरों ने कभी भी कोई शिकायत नहीं की। उन्होंने यह भी कहा कि चूंकि पीयूडीआर ने यह मुद्दा उठाया है, वे इस पर गौर करेंगे (हिन्दुस्तान टाइम्स, 25 अप्रैल, 2009, पेज 3)। यह कहना कि मज़दूरों या किसी संगठन द्वारा शिकायत करने पर ही राज्य या उसका कोई विभाग श्रम कानूनों के सही तरह से लागू किए जाने पर ध्यान देगा, 1982 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए फैसले का स्पष्ट उल्लंघन है। उस समय न्यायालय ने अपने फैसले में कहा था कि

''...हम यह बात भी जोड़ना चाहेंगे कि विभाग के स्तर पर या ठेकेदार द्वारा जब भी कोई निर्माण कार्य हो रहा हो, तो सरकार या कोई दूसरे सरकारी विभाग, जिनमें इस तरह का काम कराने वाले सार्वजनिक क्षेत्र के कॉरपोरेशन भी शामिल हैं, को पूरी सावधानी से इस बात पर नज़र रखनी चाहिए कि इस स्थान पर सभी श्रम कानूनों का पालन हो रहा है या नहीं। इन्हें इस बात का इंतजार नहीं करना चाहिए कि इन कानूनों के प्रावधानों के लागू न होने के बारे में पहले मज़दूर शिकायत करें तभी वे इस तरह की गलती करने वाले अधिकारी या ठेकेदार के खिलाफ कार्यवाही करेंगे। इसकी बजाय, उन्हें निश्चित समयांतराल पर नियमित निरीक्षण की एक व्यवस्था विकसित करनी चाहिए। कभी–कभी बड़े अधिकारियों द्वारा औचक निरीक्षण भी किया जाना चाहिए, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि श्रम कानूनों के किसी प्रावधान का उल्लंघन नहीं हो रहा है और मज़दूरों को इन प्रावधानों के अनुसार मिलने वाले अधिकारों और फायदों से वंचित नहीं किया जा रहा है। यदि कहीं यह बात सामने आती है कि श्रम कानूनों के प्रावधानों का उल्लंघन हो रहा है तो संबंधित अधिकारी या ठेकेदार के खिलाफ तुरंत कार्रवाई की जानी चाहिए। एक सामाजिक कल्याणकारी राज्य में सरकार या सरकारी प्राधिकारी या सार्वजनिक क्षेत्र के किसी कॉरपोरेशन से कम–से–कम इन बातों को सुनिश्चित करने की उम्मीद की जाती है।'' (पीयूडीआर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य, 1982).

न्यायालय के निर्देश के अनुसार देखें तो यह सरकारी एजेंसियों की ज़िम्मेवारी होनी चाहिए थी कि वे मज़दूरों के अधिकारों के उल्लंघन का स्वयं पता लगाते तथा इसके खिलाफ कार्यवाई करते। लेकिन तब से आज तक सरकारी एजेंसियों ने इस तरह की कोई पहल नहीं की। यहाँ तक कि राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण के दौरान पीयूडीआर द्वारा अपनी रिपोर्ट जारी करने तथा सरकारी एजेंसियों से शिकायत करने के बावजूद भी इस तरफ कोई ध्यान नहीं दिया गया। ज़ाहिर है कि यहाँ सर्वोच्च न्यायालय के आदेश की खुलेआम अवमानना होती रही है।

संख्या में शौचालयों की और इनकी रोज़ाना सफाई की व्यवस्था की जाए।

ये सभी माँगें मज़दूरों के जीवन और जीविका से जुड़े निहायत बुनियादी कानूनी अधिकारों से संबंधित हैं। बहरहाल, राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों पर इन बुनियादी ज़रूरतों की पूर्ति का पूरी तरह से अभाव रहा और मज़दूरों के अधिकारों का खुल्लम–खुल्ला उल्लंघन होता रहा। राष्ट्रमंडल खेलों की चमक–दमक और राष्ट्रीय गौरव के नाम पर एक ऐसा माहौल तैयार कर दिया गया जिसमें मज़दूरों के साथ हो रहे इस अमानवीय और निंदनीय व्यवहार की ओर बहुत ही कम लोगों का ध्यान जा पाया।

उच्च न्यायालय द्वारा 'मॉनिटरिंग कमिटी' का गठन

3 फरवरी 2010 को जनहित याचिका की सुनवाई करते हुए उच्च न्यायालय ने चार सदस्यीय मॉनिटरिंग कमिटी का गठन किया। इस कमिटी में शामिल सदस्य थे – राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार के श्रम–सचिव श्री आर. डी. श्रीवास्तव, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार के श्रमायुक्त श्री ए. के. सिंह, संयुक्त राष्ट्रसंघ में पूर्व

भारतीय राजदूत श्रीमति अरूंधती घोष और राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के विशेष रैपोटेयर डॉ. लक्ष्मीधर मिश्रा। न्यायालय ने कमिटी को यह निर्देश दिया कि वह दिल्ली में निर्माण कार्यों में लगे मज़दूरों की शिकायतों को दूर करने के लिए और बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के प्रावधानों को लागू करने के लिए समुचित कदम उठाए। न्यायालय ने वैलफेयर बोर्ड को भी यह निर्देश दिया कि वह कमिटी द्वारा ज़ारी किए गए निर्देशों का पालन करे। न्यायालय ने कमिटी से 17 मार्च तक अपनी रिपोर्ट सौंपने के लिए कहा।

मॉनिटरिंग कमिटी का कामकाज

मॉनिटरिंग कमिटी ने अपनी पहली बैठक में, केन्द्रीय श्रम आयुक्त को सदस्य के रूप में शामिल कर लिया। ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण से संबंधित अधिकांश परियोजनाएँ केन्द्र सरकार के हाथों में थी।

कमिटी के सदस्यों ने इसी बैठक में यह फैसला किया कि वे याचिका दायर करने वाले संगठनों को अपनी बैठकों में भाग लेने देंगे और इन के सदस्यों को अपने साथ निर्माण स्थलों का दौरा करने देंगे। यह फैसला इसलिए किया गया क्योंकि याचिकाकर्ताओं ने ही राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों की ज़मीनी हकीकत को उजागर किया था। समय कम होने के कारण सभी निर्माण स्थलों का दौरा करना मुमकिन नहीं था, इसलिए कमिटी ने कुछ खास चुनिंदा निर्माण स्थलों की स्थिति का निरीक्षण करने का फैसला किया। कमिटी ने जिन निर्माण स्थलों का दौरा किया उनके नाम इस प्रकार हैं: राष्ट्रमंडल खेल गाँव, जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम, दिल्ली इंटरनेशनल एयरपोर्ट लिमिटेड, गाज़ीपुर (जहाँ तीन स्तरीय ग्रिड सेपरेटर का निर्माण हुआ था), तुगलक रोड (मेट्रो), शास्त्री पार्क (मेट्रो), दिल्ली विश्वविद्यालय क्षेत्र, सिरी फोर्ट में रोड के किनारे और सिरी फोर्ट स्टेडियम, आर. के. खन्ना स्टेडियम, अफ्रीका ऐवेन्यू और उसके आस–पास का क्षेत्र आदि (देखें तालिका 1)। कमिटी दिल्ली विश्वविद्यालय और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से भी मिली, जिन्होंने राष्ट्रमंडल खेल के निर्माण स्थलों के संबंध में किए अपने अध्ययन पर आधारित रिपोर्ट कमिटी को सौंपीं।

न्यायालय द्वारा सौंपे गये काम की शुरूआत से ही कमिटी के संघटन में एक गंभीर विरोधाभास उभरकर सामने आने लगा। कमिटी के दो सदस्य राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली के श्रम विभाग से जुड़े हुए थे और साथ ही केन्द्रीय श्रम विभाग से भी एक सदस्य को बाद में कमिटी में शामिल किया गया था। तकनीकी रूप से ये सभी प्रतिवादियों में से थे। कमिटी की स्थापना श्रमिकों के हितों को ध्यान में रखकर की गई थी। लेकिन यह बात दोनों ही श्रम विभागों के हित में नहीं थी कि श्रम कानूनों के ठीक तरीके से लागू न होने की बात उभरकर सामने आए। ज़ाहिर है कि इस विरोधाभास ने कमिटी के कामकाज को बुरी तरह से प्रभावित किया। श्रम विभाग जिसका काम मज़दूरों के हितों की हिफाजत करना है, जांच के दौरान खुले और शर्मनाक रूप से मज़दूरों के हितों की कीमत पर, ठेकदार कंपनियों द्वारा किए जा रहे अपराधों को छिपाने में लगा रहा। डीडीए, एनडीएमसी, एमसीडी, डीएमआरसी, डीआईएएल, और सीपीडब्ल्यूडी जैसी दूसरी सरकारी एजेंसियों ने इसी मकसद में श्रम विभाग के साथ हाथ मिला लिया। असल में, ये ऐजेंसियाँ भी 'आर्दश मुख्य नियोक्ता' के रूप में अपने द्वारा की गई गड़बड़ियों को छिपाना चाहती थीं।

कमिटी के काम में दूसरी कई अड़चनें भी सामने आईं। यह अपने–आप में आश्चर्यजनक था कि न्यायालय ने मॉनिटरिंग कमिटी के सदस्यों के काम करने के लिए यात्रा भत्ता या अन्य सुविधाओं, विभिन्न निर्माण स्थलों पर दौरे के समन्वय आदि से संबंधित बुनियादी सुविधाओं के संबंध में कोई निर्देश नहीं दिया था। स्वतंत्र और प्रभावकारी तरीके से जाँच–पड़ताल करने के लिए ये सुविधाएँ बहुत ही ज़रूरी थीं। इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि कमिटी के सदस्यों के पास कोई 'प्राधिकारीय चिट्ठी' या पहचान पत्र नहीं थे जिनकी मदद से वे बिना किसी रोक–टोक के स्वतंत्र रूप से निर्माण स्थलों का दौरा कर पाते। इन सुविधाओं के अभाव में कमिटी के सदस्य निर्माण स्थलों का दौरा करने के लिए श्रम विभाग (यानी **प्रतिवादियों में से एक**) पर निर्भर रहे। कमिटी ने खुद अपनी रिपोर्ट में इस बात का उल्लेख करते हुए लिखा है कि

''कमिटी के सदस्यों के पास कोई पहचान पत्र नहीं थे। इस कारण डीआईएएल, डीएमआरसी, और जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम जैसे क्षेत्रों में प्रवेश के लिए कमिटी को

मॉनिटरिंग कमिटी द्वारा विभिन्न निर्माण क्षेत्रों के दौरों का विवरण				
क्रमांक	**तारीख**	**निर्माण क्षेत्र**	**मुख्य नियोक्ता**	**ठेकेदार कंपनियाँ**
1	19.2.10	कॉमनवैल्थ गेम्स विलेज, अक्षरधाम कॉम्पलैक्स	डीडीए – एमआरएमजीएफ	आहलूवालिया कांट्रेक्टस, सैम इंडिया विल्डर प्राइवेट लिमिटिड, फैड एलॉएड कॉरपोरेशन, शिव नरेश स्पोर्टस प्राइवेट लिमिटिड
2	19.2.10	ग्रिड सेपेरेटर, गाज़ीपुर	पीडब्ल्यूडी	एएफसीओएनएस इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटिड
3	20.2.10	जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम	सीपीडब्ल्यूडी	शपूरजी पलोंजी, एरा इंफ्रास्ट्रक्चर, नागार्जुन
4	3.3.10	इंटरनेशनल एअरपोर्ट, दिल्ली	डीआईएएल	लारसन एंड टोरबो
5	4.3.10	बीसी 16, तुगलक रोड	डीएमआरसी	एलपाइन सैमसंग–एचसीसी
6	6.3.10	शास्त्री पार्क	डीएमआरसी	एलपाइन सैमसंग–एचसीसी और सीसीसीएल
7	9.3.10	दिल्ली विश्वविद्यालय क्षेत्र	दिल्ली विश्वविद्यालय	एमसीडी, रामा कांट्रेक्टस, नागार्जुन कंस्ट्रक्शनस
8	12.3.10	सीरी फोर्ट स्टेडियम और रिहायशी इलाका	पीडब्ल्यूडी,डीडीए	जैन कांट्रेक्टरस, बीई बिलीमोरिआ कंपनी
9	12.3.10	आरके खन्ना टेनिस स्टेडियम		स्काईलाइन इंजीनियरिंग कांट्रेक्टरस प्राइवेट लिमिटिड
10	12.3.10	अफ्रीका एवेन्यू और आसपास का इलाका	पीडब्ल्यूडी	सत्य प्रकाश ब्रदर्स प्राइवेट लिमिटिड

कंपनी के अधिकारियों पर निर्भर रहना पड़ा क्योंकि वहाँ बाहरी लोगों के प्रवेश पर बहुत ज़्यादा नियंत्रण था। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता कि कमिटी हर निर्माण स्थल पर बेरोक–टोक या स्वतंत्र रूप से जा पाई। न्यायालय के आदेश में कमिटी के काम काज के लिए किसी बुनियादी सुविधा का भी प्रावधान नहीं था। इस कारण कमिटी को इस तरह की सुविधाओं के लिए केन्द्र और राज्य की श्रम कानून क्रियान्वयन मशीनरी पर निर्भर रहना पड़ा। कमिटी को अपनी रिपोर्ट की टाईपिंग के लिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के सचिवालय से सहयोग लेना पड़ा।''

(कमिटी रिपोर्ट के पृ. 15 से)

इन कमियों का नतीजा यह हुआ कि

1) कमिटी ने प्रतिवादियों के अतिथियों के रूप में निर्माण स्थलों का दौरा किया। कई जगहों पर तो ठेकदार कंपनियों ने कमिटी के सदस्यों का फूलों से स्वागत किया। श्रम विभाग के प्रतिधिनियों ने यह तय करने में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाई की जाँच किस तरह की जाए। यानी निर्माण स्थलों के चुनाव, दौरे का समय और कमिटी का ज़्यादा समय ठेकेदार कंपनियों के प्रतिनिधियों के साथ बैठक करने और चाय पीने में गुज़ारने और उन्हें ठेकेदारों की अनुपस्थिति में मज़दूरों से न मिलने देने आदि में श्रम विभाग की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इसमें सबसे नुकसानदेह बात यह थी कि श्रम विभाग के अधिकारी हमेशा यह सुनिश्चित कर देते थे कि नियोक्ता एजेंसियों और ठेकेदारों को कमिटी के दौरे की पूर्वजानकारी हो। दौरों के दौरान निर्माता कंपनियों के अधिकारियों ने याचिकाकर्त्ता संगठनों के सदस्यों को मज़दूरों से बातचीत करने, उनका इंटरव्यू लेने या तस्वीर लेने से बहुत ही सख्ती से रोका।

2) अधिकारियों और नियोक्ताओं ने कई ऐसे कदम उठाए जिससे अमूमन कमिटी की जाँच औपचारिकता मात्र बन जाए। जैसे,

क. कमिटी के दौरे से पहले श्रमिकों के कैम्प में बड़े पैमाने पर सफाई, रंग रोगन, नए कूड़ेदान रखना, बदबूदार पानी के गड्ढों को भरवा देना। रास्तों पर चूने के पाउडर से लाइन बनवा देना, पेस्टीसाइड पाउडर का छिड़काव करवाना।

ख. कमिटी के दौरे से ठीक पहले मज़दूरों के कैम्प को तोड़ देना।

ग. अधिकांश मज़दूरों को निर्माण–स्थल से बाहर भेज देना, जिससे कमिटी से बातचीत करने के लिए बहुत ही कम मज़दूर बचे रहें। मज़दूरों को यह चेतावनी देना कि वे कमिटी से दूर रहें या उन्हें कह कर रखना कि उन्हें कमिटी को किस तरह के गलत बयान देने हैं। दौरों के समय यह भी देखने को मिला कि ठेकेदारों के प्रतिनिधि मज़दूरों को कमिटी के सदस्यों से दूर भगा रहे हैं। अधिकांश मौकों पर कमिटी के सदस्यों को उन्हीं मज़दूरों से बातचीत करने दिया गया, जिन्हें पहले से ही यह बता दिया गया था कि उन्हें क्या जवाब देने हैं। इसी कारण, अमूमन इस तरह के मज़दूरों ने न्यूनतम मज़दूरी, ओवरटाइम और दूसरी सुविधाओं के बारे में रटे–रटाये जवाब दिये। इस बात के पक्के सबूत मिले कि मज़दूरों को यह चेतावनी दी गई कि उन्हें कमिटी के सदस्यों को कुछ नहीं बताना है। दिल्ली विश्वविद्यालय में राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थल पर मज़दूरों ने कमिटी के दौरे से कुछ दिन पहले याचिकाकर्ताओं को यह बताया कि उन्हें 8 घंटे काम करने के लिए 110 से 120 रूपये मिल रहे हैं। लेकिन मॉनिटरिंग कमिटी के दौरे के एक दिन पहले उन्हीं मज़दूरों ने यह कहना शुरू कर दिया कि उन्हें 225 रूपये मिल रहे हैं। बहुत देर तक बातचीत करने और समझाने के बाद उन्होंने यह बताया कि नियोक्ताओं ने उन पर ऐसा कहने के लिए दबाव डाला है। मज़दूरों ने कहा कि उन्हें अपनी नौकरी खोने का डर था, इसलिए नियोक्ताओं ने उनसे जो कुछ कहने के लिए कहा वही वे कह रहे थे।

घ. कमिटी द्वारा मज़दूरों से बातचीत के दौरान श्रम विभाग और निर्माण कपंनियों के 20–25 लोगों का समूह हमेशा ही मौजूद रहता था। कमिटी के सदस्य इन लोगों से बार–बार यह अनुरोध करते कि वे उनके साथ न आएं और मज़दूरों के साथ होने वाली बातचीत में हस्तक्षेप न करें। लेकिन नियोक्ताओं के प्रतिनिधियों और श्रम विभाग के अधिकारी यह अनुरोध अनसुना करते रहे।

3) हर निर्माण स्थल पर मॉनिटरिंग कमिटी ने ठेकेदारों से कानून के अनुसार मज़दूरी दिए जाने के संबंध में दी गई जुबानी जानकारी की पुष्टि के लिए लिखित दस्तावेजों की माँग की। लेकिन,

क. ऐसे कोई भी रजिस्टर नहीं दिखाए गए जिसमें लाभार्थियों के रोज़गार, सामान्य दिन काम के कुल घंटों, सात दिनों के अंतराल पर मिलने वाले आराम यानी साप्ताहिक छुट्टी और मज़दूरों को दी जाने वाली मज़दूरी की जानकारी दर्ज़ हो। ऐसा रजिस्टर बनाना बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के अंतर्गत ज़रूरी है।

ख. कुछ जगहों पर 'मस्टर रोल' दिखाए गए। लेकिन समय की कमी होने के कारण इनकी भी सही तरीके

से जाँच पड़ताल नहीं हो पाई या मज़दूरों के बयानों के आधार पर इनकी प्रामाणिकता की जाँच नहीं की जा सकी। कुछ जगहों पर कमिटी ने यह भी पाया कि 'मस्टर रोल' पर एक ही व्यक्ति की लिखाई में सभी मज़दूरों के दस्तखत किए गए हैं।

ग. किसी भी कंपनी ने अपने ठेकेदारों की सूची या उनके लाइसेंस नंबर कमिटी को नहीं दिखाए।

मॉनिटरिंग कमिटी ने भी अपनी रिपोर्ट में कई जगह तथ्यों को छिपाए जाने की कोशिश का ज़िक्र किया है जैसे,

राष्ट्रमंडल खेलगाँव निर्माण स्थल पर:

– ''तकरीबन साढ़े चार बजे जब कमिटी मज़दूरों के रिहाइशी कैम्प संख्या 2 में पहुँची तो बहुत बड़ी संख्या में मज़दूरों को रिहाइशी कैम्प में एक जगह इकट्ठा पाया। असल में, इस समय इन्हें काम पर होना चाहिए था (काम करने का सामान्य समय 8 बजे से लेकर 5 बजे तक होता है)। जब उनसे पूछा गया कि वे काम के समय कैंप में क्यों जमा हैं तो कुछ मज़दूरों ने बताया कि उन्हें उनके ठेकेदारों ने कैंप में भेज दिया है क्योंकि उनके पास सुरक्षा हेलमेट, जूते और पहचान–पत्र नहीं थे। इसका एक संभावित कारण यह हो सकता है कि कमिटी के दौरे के कारण बड़ी संख्या में मज़दूरों को कैम्प में वापस भेज दिया गया होगा, ताकि कमिटी के सदस्य इन मज़दूरों से पूछताछ न कर सकें।

– जब कमिटी के सदस्य मज़दूरों से मिलने जाते थे तो परियोजना से जुड़े अधिकारी भी उनके साथ होते थे। इस कारण कमिटी मज़दूरों से स्वतंत्र रूप से और खुलकर बातचीत नहीं कर पाती थी। कमिटी के सदस्यों के अनुरोध ा करने या नाराज़ होने के बावजूद इन अधिकारियों के रवैये में कोई बदलाव नहीं आया।

– राष्ट्रमंडल खेलगाँव के दोनों ही कैम्पों में कमिटी के दौरे के ठीक पहले रास्तों और नालों की सफाई कर दी गई थी। यह साफ है कि ऐसा असलियत को छिपाने के लिए किया गया था और ऐसा करना प्रबंधकों की कोई अच्छी छवि नहीं दर्शाता।

– हर कोने पर सफेद पाउडर के घेरों से घिरे कूड़ेदान रखे दिए गए थे, यह सब कुछ देखने में बहुत ही बुरा लग रहा था।'' (कमिटी की रिपोर्ट पृ. 52–53)

शास्त्री पार्क के सीसीसीएल कैम्प में:

''पुताई या पेंटिंग करने के लिए सिर्फ दो पेंटर थे, जिन्होंने पिछले दिनों में मज़दूरों के इस कैम्प के सभी कमरों में पेंटिंग की थी।'' (पृ. 74)

शास्त्री पार्क के आईटी पार्क में:

''ऐसा लग रहा था कि कमिटी के साथ प्रबंधकों के चलने के कारण मज़दूर डरे हुए हैं।'' (पृ. 75)

दिल्ली विश्वविद्यालय के पोलो ग्राउंड में:

''कमिटी को बच्चों के एक ऐसे छोटे से बाल घर में ले जाया गया जहाँ एक शिक्षक भी था। लेकिन याचिकाकर्ताओं के अनुसार दो दिन पहले तक वहाँ ऐसा कुछ भी नहीं था।'' (पृ. 79)

आर. के. खन्ना स्टेडियम में:

''मज़दूरों को अपने वेतन के बारे में कोई शिकायत नहीं थी, शायद इसका कारण यह था कि बातचीत के समय प्रबंधन के प्रतिनिधि कमिटी के साथ थे।'' (पृ. 82)

राज्य की एजेंसियों और परियोजना अधिकारियों ने वास्तविक स्थिति को छिपाने की बहुत कोशिशें की। हालांकि वे पूरी तरह से ऐसा कर पाने में नाकाम रहे, पर इस कोशिश का असर यह तो हुआ ही कि वे यह छिपाने में सफल रहे कि श्रम कानूनों और मज़दूरों के अधिकारों का उल्लंघन कितने बड़े स्तर पर हो रहा है।

मॉनिटरिंग कमिटी की रिपोर्ट

असलियत छिपाए जाने की इन तमाम कोशिशों के बावजूद मॉनिटरिंग कमिटी ने 17 मार्च 2010 को दिल्ली उच्च न्यायालय में बहुत ही सख्त रिपोर्ट पेश की। इस रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से यह कहा गया कि,

1. ''यह कमिटी इस नतीजे पर पहुँची है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा लगाए गए आरोप सही हैं। (पृ 2)

2. ''ठेकेदारों और मुख्य नियोक्ताओं के प्रतिनिधियों के बीच घिनौने गठजोड़ या साँठ–गाँठ की संभावना को पूरी तरह से खारिज नहीं किया जा सकता है। जहाँ इस तरह का गठजोड़ या साँठ–गाँठ हो, वहाँ यह उम्मीद करना व्यर्थ है कि काम करने वाले मज़दूरों को मुख्य नियोक्ता के प्रतिनिधियों से कोई न्याय मिल पाएगा। दूसरे शब्दों में कानून के प्रावधानों के संबंध में ज़मीनी हकीकतों की जिस हद तक दुगर्ति हो रही है वह मज़दूरों के हितों के लिए बहुत ही नुकसानदायक है। (पृ. 88)

कमिटी के कुछ प्रमुख निष्कर्ष ये थे –

1. मज़दूरी

मॉनिटरिंग कमिटी ने निर्माण स्थलों के अपने दौरे में यह पाया कि याचिकाकर्ताओं का यह कहना पूरी तरह से, या कुछ जगहों पर आंशिक रूप से, सही है कि मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी (जिसमें अधिसूचित न्यूनतम मज़दूरी न देना, साप्ताहिक छुट्टी न देना और ओवर टाइम के लिए साधारण मजूदरी की तुलना में दुगनी मजूदरी न देना शमिल है) नहीं दी जा रही है।

क) मज़दूरी की दर और काम के घंटे

बहुत से मामलों में मज़दूरों को ओवर टाइम के लिए मज़दूरी नहीं मिल रही थी। जहाँ ओवर टाइम के लिए मज़दूरी दी भी जा रही थी वहाँ भी इन्हें साधारण मज़दूरी की दर से पैसा दिया जा रहा था, न कि ओवर टाइम के हिसाब से। कानून में इस बात का स्पष्ट प्रावधान है कि ओवर टाइम करने वाले मज़दूरों को साधारण मज़दूरी से दुगना पैसा मिलना चाहिए। अधिकांश मामलों में मज़दूरों के लिए किसी साप्ताहिक छुट्टी की व्यवस्था नहीं थी। यदि यह व्यवस्था होती तो मज़दूरों को 6 दिन काम करने के लिए 7 सात दिन का पैसा मिलता। असल में, मज़दूरों को दिहाड़ी मज़दूर के रूप में काम पर रखा गया था तथा जिस दिन वे काम करते थे उन्हें केवल उसी दिन के पैसे दिए जाते थे।

राष्ट्रमंडल खेलगाँव निर्माण स्थल पर अकुशल मज़दूरों को 105 रूपये, कुशल मज़दूरों को 250 रूपये और अति कुशल मज़दूरों को 300 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से मज़दूरी दी जा रही थी। जवाहरलाल नेहरू में स्टेडियम में अधिसूचित न्यूनतम मज़दूरी नहीं दी जा रही थी। बहुत से मज़दूरों को जनवरी 2010 से कोई भुगतान नहीं किया गया था। मज़दूरों के पूरे वेतन को रोककर उन्हें रोजमर्रा के *खर्चे* के लिए पैसा दिया जाता था। जिससे मज़दूरों के अपनी मर्ज़ी से कहीं भी जा सकने की स्वतंत्रता पर रोक लगती है। इस तरह मज़दूर कहीं भी काम करने की अपनी आज़ादी खो बैठते हैं और अपनी जीविका के लिए पूरी तरह से प्रबंधन पर निर्भर हो जाते हैं क्योंकि मज़दूरी के लिए दूसरी जगह जाने का मतलब होता है कि वे अपनी 4–5 महीने की कमाई खो बैठें। इस तरह से ये बंधुआ मज़दूर की तरह एक ही ठेकेदार के अधीन काम करने के लिए विवश थे। दिल्ली विश्वविद्यालय में एमसीडी द्वारा रोड से संबंधित काम कराया जा रहा था। यहाँ मज़दूरों ने यह बताया कि यहाँ अकुशल मज़दूरों को प्रतिदिन 100 रूपये और अर्धकुशल मज़दूरों को प्रतिदिन 150 रूपये मिलते थे। दिल्ली विश्वविद्यालय के 'स्पोर्ट्स कॉम्पलेक्स' निर्माण स्थल पर अकुशल मज़दूरों को 100 रूपये और कुशल मज़दूरों को 200 रूपये दिये जा रहे थे। यह बात भी सामने आई कि पिछले साल एक उप–ठेकेदार मज़दूरों का पैसा लेकर भाग गया था। अफ्रीका एवेन्यू निर्माण स्थल पर मज़दूरों को दिहाड़ी पर रखा गया था और उन्हें हर रोज़ तकरीबन 100 रूपये मिलते थे।

ख) मुख्य नियोक्ता की मौजूदगी

निमार्ण स्थलों पर कमिटी को यह बताया गया कि मज़दूरों को मज़दूरी देते समय मुख्य नियोक्ता द्वारा

वैधानिक न्यूनतम वेतन

भारत सरकार

अकुशल – 'ए' क्षेत्र 203 रू., 'बी' क्षेत्र 169 रू., 'सी' क्षेत्र 135 रू.

अर्धकुशल – 'ए' क्षेत्र 225 रू., 'बी' क्षेत्र 192 रू., 'सी' क्षेत्र 158 रू.

कुशल – 'ए' क्षेत्र 248 रू., 'बी' क्षेत्र 225 रू., 'सी' क्षेत्र 192 रू.

अति कुशल – 'ए' क्षेत्र 270 रू., 'बी' क्षेत्र 248 रू., 'सी' क्षेत्र 225 रू.

दिल्ली सरकार – फरवरी 2010 से पहले की दर

अकुशल – 152 रू. अर्धकुशल – 158 रू. कुशल – 168 रू.

मार्च 2010 में ये वेतन बढ़ा दिए गए और नए रेट फरवरी से लागू किए गए। नए रेट इस तरह से हैं –

अकुशल – 203 रू. अर्धकुशल – 225 रू. कुशल – 248 रू.

औपचारिक रूप से नियुक्त किया गया प्रतिनिधि मौजूद रहता है। लेकिन किसी ऐसे प्रतिनिधि द्वारा यह सत्यापित करने के ऐसे कोई प्रमाण नहीं मिले कि इन इन मज़दूरों को कानून के अनुसार न्यूनतम वेतन मिला है। इस तरह के किसी लिखित या प्रामाणिक सबूत के बिना इस बात पर भरोसा नहीं किया जा सकता है कि मुख्य नियोक्ता के प्रतिनिधि की मौजूदगी में ठेकेदारों/उप ठेकेदारों द्वारा मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी दी जा रही है। हालांकि राष्ट्रमंडल खेलगाँव में मुख्य नियोक्ता डीडीए के प्रतिनिधि ा ने यह दावा किया कि वे वेतन/मज़दूरी का वितरण होने के समय मौजूद रहते हैं। परन्तु उप ठेकेदारों और प्रमुख नियोक्ता के प्रतिनिधि द्वारा मज़दूरों के वेतन में कटौती के तथाकथित मामलों को रोकने के लिए कोई व्यवस्था मौजूद नहीं दिखाई दी। जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम के निर्माण स्थल पर ठेकेदार ही मज़दूरों को वेतन देते हैं। यहाँ इस बात का कोई प्रमाण नहीं मिला कि मज़दूरों को वेतन देने के समय प्रमुख नियोक्ता का प्रतिनिधि मौजूद रहता है।

ग) 'मस्टर रोल्स', 'वेज स्लिप' और पहचान पत्र

सिर्फ कुछ निर्माण स्थलों पर ही 'मस्टर रोल्स' मिले। दिल्ली के बीओसीडब्ल्यू रूल्स के नियम 241 में यह प्रावधान किया गया है कि हर निर्माण स्थल पर व्यस्थित 'मस्टर रोल्स' बनाए जाने चाहिए।

राष्ट्रमंडल खेलगाँव और जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम जैसे निर्माण स्थलों पर संबंधित अधिकारियों से बार–बार आग्रह करने बावजूद भी उनके द्वारा 'मस्टर रोल्स' पेश नहीं किये गये। दिल्ली विश्वविद्यालय में कमिटी के दौरे के समय स्पोर्ट्स कॉम्पलैक्स परियोजना स्थल पर नागार्जुन कंपनी द्वारा 'मस्टर रोल्स' दिखाए गए। लेकिन कमिटी ने पाया कि इसमें कई मज़दूरों के हस्ताक्षर एक ही लिखावट में थे। इससे ऐसा लगता है कि ये 'मस्टर रोल्स' जाली थे।

राष्ट्रमंडल खेलगाँव और दिल्ली विश्वविद्यालय निर्माण स्थलों पर मज़दूरों को कोई रोज़गार या पहचान पत्र नहीं दिये गये थे।

1950 के 'मिनिमम वेजेस सेन्ट्रल रूल्स' के नियम 26 (2) के अंतर्गत इस बात का प्रावधान है कि निर्माण काम में लगे मज़दूरों को वेतन की परची (वेज स्लिप) दी जानी चाहिए। लेकिन किसी भी निर्माण स्थल पर मज़दूरों को 'वेज स्लिप' नहीं दी जा रहीं थीं। गाज़ीपुर निर्माण स्थल पर मुख्य ठेकेदार ने यह दावा किया कि वे मज़दूरों को 'वेज स्लिप' देते हैं। लेकिन इसके बावजूद वे कोई 'वेज स्लिप' नहीं दिखा सके।

घ) यात्रा और विस्थापन भत्ता

अधिकांश निर्माण स्थलों पर दूसरे राज्यों के मज़दूर काम कर रहे हैं। कानून में इस बात का प्रावधान है कि मज़दूरों को काम पर रखते समय उन्हें यात्रा भत्ता, विस्थापन भत्ता, यात्रा के दौरान का वेतन और दूसरी कई सुविधाएँ दी जानी चाहिए। लेकिन मज़दूरों से बातचीत करते हुए कभी भी यह बात सामने नहीं आई कि उन्हें काम पर रखते वक्त ये सारी सुविधाएँ दी गईं। राष्ट्रमंडल खेलगाँव निर्माण स्थल पर मज़दूरों से इस बारे में सवाल किया गया, लेकिन मज़दूरों ने बताया कि उन्हें इस तरह का कोई भत्ता नहीं मिला।

2) महिला मज़दूरों के साथ भेदभाव

कई निर्माण स्थलों के अपने दौरे के दौरान कमिटी ने यह पाया कि वहाँ बहुत कम महिलाओं को काम दिया गया था। कई निर्माण स्थलों पर तो महिलाओं को बिल्कुल ही काम पर नहीं रखा गया था। मॉनिटरिंग कमिटी ने इस तथ्य को बहुत ही अफ़सोसजनक माना। एक जगह (गाज़ीपुर में **ग्रिड सेपरेटर** के साइट पर) तो संबंधित कंपनी के अधि ाकारियों ने यहाँ तक तर्क दिया कि कंपनी का यह नियम है कि वह महिलाओं को काम पर नहीं रखती। जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में निर्माण कार्य में लगी कपंनी के अधि ाकारियों ने तर्क दिया कि कंपनी को कुछ ख़ास काम करने के लिए कुशल मज़दूरों की ज़रूरत है और महिलाओं के पास इस तरह की कुशलता नहीं होती। शास्त्री पार्क निर्माण स्थल पर भी कंपनी ने महिला मज़दूरों को काम पर नहीं रखा था। दूसरी ओर, सिरी फोर्ट, आर. के. खन्ना और अफ्रीका एवेन्यू निर्माण स्थलों पर कुछ महिला मज़दूरों को काम पर रखा गया था। राष्ट्रमंडल खेलगाँव में एक ही तरह के काम के लिए महिलाओं को पुरूषों से कम वेतन दिया जा रहा था। इक्वल रेमुनरेशन ऐक्ट, 1976 के नियम 4 में यह प्रावधान है कि एक ही तरह के काम के लिए पुरूषों

और महिलाओं को समान वेतन दिया जाएगा।

3) स्वास्थ्य और सुरक्षा

राष्ट्रमंडल खेलगाँव में यह बताया गया कि यहाँ ठेकेदारों और चार उप–ठेकेदारों द्वारा तकरीबन 5 हज़ार से ज़्यादा मज़दूरों को काम पर लगया गया है। लेकिन इसके बावजूद यहाँ कंपनी के ठेकेदार यह बताने में नाकाम रहे कि मज़दूरों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के संबंध में उनकी नीति क्या है या उन्होंने इस संबंध में क्या ठोस उपाय किए हैं। दिल्ली के बीओसीडब्ल्यू रूल्स के नियम 223 में यह प्रावधान है कि इंस्पेक्शन ऑफ बिल्डिंग एंड कन्सट्रक्शन के चीफ इंस्पैक्टर द्वारा एक निश्चित अंतराल पर मज़दूरों का मेडिकल परीक्षण किया जाएगा। लेकिन यहाँ ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी। बीओसीडब्ल्यू रूल्स के नियम 39 में यह प्रावधान है कि जहाँ 50 से ज़्यादा निर्माण मज़दूर काम कर रहे हों, वहाँ मज़दूरों की सुरक्षा और स्वास्थ्य के बारे में स्पष्ट लिखित नीति मौजूद होनी चाहिए। लेकिन शापूरजी पालोनजी, इरा इन्फ्रास्ट्रक्चर और नागार्जुन कंस्ट्रक्शन्स कंपनियों के पास हालांकि 50 से ज़्यादा मज़दूर थे परन्तु उन्होंने सुरक्षा और स्वास्थ्य के संबंध में ऐसी कोई लिखित नीति नहीं बनाई हुई थी।

असल में, निर्माण स्थलों पर मज़दूरों के स्वास्थ्य और सुरक्षा की स्थिति बहुत ही असंतोषजनक थी और कमिटी ने इस बारे में बहुत सी सिफारिशें की। कमिटी की रिपोर्ट के अनुसार इन जगहों पर दुर्घटना होना आम बात थी। इसके कारण मज़दूरों को गंभीर चोटें लगीं और वे अस्थायी रूप से तथा कई बार स्थायी रूप से अपाहिज हो गए। कई जगहों पर मज़दूरों की मौत भी हुई। कार्य स्थल बहुत ही गंदे थे और स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के लिहाज से खतरनाक थे। यहाँ हर जगह पुराना टूटा हुआ और बेकार सामान कार्य स्थल पर बिखरा हुआ था और इस ओर किसी का ध्यान नहीं जाता था। राष्ट्रीय मानकों के अनुसार सुरक्षा के साधन या तो उपलब्ध नहीं थे या उनका उपयोग नहीं किया जा रहा था। कुछ निर्माण स्थलों पर मज़दूरों ने जूते पहन रखे थे। लेकिन उन्होंने यह बताया कि इन जूतों के बदले में उनके वेतन से 300 रूपये से 800 रूपये तक काटे गए थे। यह कानूनी प्रावधानों का उल्लंघन है। राष्ट्रमंडल खेलगाँव निर्माण स्थल पर पत्थर की कटाई करने वाले मज़दूरों ने यह बताया कि उन्हें सुरक्षा के लिए दस्ताने नहीं दिये गये थे। इसके अलावा, निर्माण स्थल पर कई भारी भरकम यंत्र एवं वाहन चलते थे जिससे बहुत ज़्यादा धूल उड़ती थी, फिर भी निर्माण स्थल पर कोई चेतावनी नोटिस नहीं लगे हुए थे। यदि कहीं इस तरह के नोटिस दिखे भी, तो वह अंग्रेजी में थे जिसे अधिकांश मज़दूर नहीं समझ सकते थे। मज़दूरों को चोट लगने की कई खबरें सामने आईं। इनमें से कई मामले मज़दूरों के लिए जानलेवा साबित हुए। दिल्ली विश्वविद्यालय के स्पोर्ट्स कॉम्पलेक्स निर्माण स्थल पर मज़दूर बिना जूतों के काम कर रहे थे और इनके पास सुरक्षा की दूसरी बुनियादी चीजें भी नहीं थीं। एक दुर्घटना में एक महिला मज़दूर की मौत हो गई और उसके परिवार को कोई मुआवज़ा नहीं मिला था (पृ. 77)।

4) वैलफेयर बोर्ड में रजिस्ट्रेशन

मॉनिटरिंग कमिटी ने जिन निर्माण स्थलों का दौरा किया, उनमें सिर्फ कुछ मज़दूरों का ही बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के अंतर्गत वैलफेयर बोर्ड में रजिस्ट्रेशन हुआ था। गाजीपुर में कुल 350 मज़दूरों में से सिर्फ 25 मज़दूरों का रजिस्ट्रेशन हुआ था और इन मज़दूरों को भी रजिस्ट्रेशन के बाद 'पास बुक' नहीं मिली थीं। डीआईएएल में 5 प्रतिशत से भी कम मज़दूरों का रजिस्ट्रेशन हुआ था। जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में शापूरजी पालोनजी कंपनी के अंतर्गत काम करने वाले 450 मज़दूरों में से किसी का भी रजिस्ट्रेशन नहीं हुआ था। इस निर्माण स्थल पर इरा इन्फ्रास्ट्रक्चर और नागार्जुन कंपनियाँ अपने मज़दूरों के रजिस्ट्रेशन के बारे में कोई भी जानकारी नहीं दे पाए। शास्त्री पार्क में भी मज़दूरों का वैलफेयर बोर्ड में रजिस्ट्रेशन नहीं हुआ था और यहाँ मज़दूरों को वैलफेयर बोर्ड के बारे में कोई जानकारी भी नहीं थी। लेकिन प्रबंधन ने यह दावा किया कि रजिस्ट्रेशन के लिए 475 फॉर्म भेजे जा चुके हैं और उनके जवाब की प्रतीक्षा की जा रही है।

5) रहने के हालात

रिपोर्ट में इस बात का उल्लेख किया गया है कि कार्य स्थल के नज़दीक ही मज़दूरों के रहने के लिए कॉलोनियाँ बनाई गई हैं। जगह की कमी के कारण बैरक एक–दूसरे से सटे हुए थे, जिससे वहाँ काफी घिचपिच थी और ये जगहें साफ नहीं नज़र आती थीं। मोबाईल और स्थाई दोनों ही तरह

के शौचालयों व बाथरूमों की नियमित रूप से सफाई करने की कोई व्यवस्था नहीं थी। इस कारण, इन जगहों का वातावरण स्वास्थ्य के लिए काफी नुकसानदायक था। कॉलोनी के कार्य स्थल के नज़दीक होने के कारण बैरकों पर धूल की मोटी परतें जमी थीं। कॉलोनियों में जहाँ जल मल निकास की व्यवस्था थी भी वहाँ भी नालियों का रख–रखाव ठीक से नहीं किया गया था। एमसीडी, पीडब्ल्यूडी, एनडीएमसी और सीपीडब्ल्यूडी द्वारा राष्ट्रमंडल खेलों के लिए रोड को चौड़ा करने/सौंदर्यीकरण संबंधित परियोजनाओं में काम करने वाले मज़दूरों की प्लास्टिक के चादर से ढ़की झोपड़ियाँ हर जगह देखी जा सकतीं थीं। फुटपाथ पर बनी इन झोपड़ियों में शौचालयों और पानी जैसी बुनियादी सुविध ाओं का अभाव था। अफ्रीका ऐवेन्यू पर अप्रवासी मज़दूरों को उनके परिवारों के साथ सामूहिक रूप से रखा गया था। यानी मज़दूरों के परिवारों के लिए अलग–अलग झोपड़ियों तक की व्यवस्था नहीं की गई थी। खेल गाँव में मज़दूरों के बैरक एस्बेस्टस की चादरों के बने हुए थे और इनमें खिड़कियों व रोशनदान तक की व्यवस्था नहीं थी। यहाँ एक दूसरे कैंप में डोरमेटरी में मज़दूरों के सोने के लिए तीन स्तरीय पलंग (बंक बेड) लगे थे जिन पर पलंग के नाम पर केवल लकड़ी के तख्ते थे। यह बहुत शर्मनाक बात है कि सोने के लिए इस तरह की व्यवस्था को पलंग का नाम दिया जाए। इस बात में किसी शक की गुंजाइश नहीं है कि गर्मियों में इस तरह के कमरे या हॉल में सोना बहुत ही कष्टप्रद होता होगा। कुछ मज़दूरों ने बताया कि उन्हें अपनी ज़रूरत का सामान कैम्प के अंदर की दुकान से ज़्यादा कीमत पर खरीदना पड़ता था। इसका कारण यह था कि बहुत से कैम्पों के नज़दीक कोई रिहाइश न होने के कारण कोई दुकान नहीं थीं। गाज़ीपुर में मज़दूरों के कैम्प के ठीक बाहर खुले मैदान में गंदा पानी जमा था। 400 वर्ग मीटर के क्षेत्र में फैला यह पानी प्रदूषित था और स्वास्थ्य के लिए बहुत ही नुकसानदेह था। इस पानी से दुर्गंध भी आ रही थी जो वहाँ के वातावरण को असहनीय बना रही थी। बैरक जीआई शीट के बने हुए थे और इसमें जीआई की छत बनी हुई थी। इसमें कोई खिड़की या रोशनदान नहीं था और न ही इसके फर्श ठीक से बनाए गए थे। इन कमरों में पंखे की व्यवस्था भी नहीं थी। यहाँ सफाई की समुचित व्यवस्था नहीं थी। शौचालयों में दरवाज़े नहीं थे और इनकी सफाई की भी कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। यहाँ कोई बाथरूम नहीं थे मज़दूरों को खुले में नहाना पड़ता था। इसके लिए प्रवेश द्वारा के नज़दीक दीवार में कुछ पानी के नल लगे हुए थे।

जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में बैरक टूटी–फूटी हालत में थे। इनमें न तो गर्मी से सुरक्षा मिल सकती थी और न ही ठंड से। ये बैरक सिकुड़न वाली टीन की चादरों से बने हुए थे। इस तरह की चादरों से गर्मी में कमरा बहुत ज़्यादा गर्म हो जाता है। मज़दूरों और शौचालयों के बीच का अनुपात 15:1 था। यानी 15 मज़दूरों के लिए एक शौचालय था और इन शौचालयों का रख–रखाव भी बहुत ही खराब तरीके से किया गया था। इस अनुपात के कारण मज़दूरों को शौचालय जाने के लिए लंबे समय तक इंतजार करना पड़ता था और इस कारण उन्हें काम पर पहुँचने में देरी होती थी। इसलिए, कई बार मज़दूर खुले में ही शौच कर लिया करते थे। कैम्पों के कार्य–स्थल के नज़दीक होने के कारण यहाँ धूल और धुँआ भरा रहता था। कोई ऐसी कैंटीन नहीं थीं जहाँ सब्सिडीयुक्त (रियायती) दर पर खाना मिलता हो। जहाँ तक पानी का सवाल है, एक व्यक्ति के लिए 40 लीटर पानी की ज़रूरत होती है। इस लिहाज से हर रोज 64,000 लीटर पानी की ज़रूरत थी। लेकिन कहीं इतना ज़्यादा पानी रखने की कोई व्यवस्था नहीं थी और न ही पानी को पीने लायक बनाने के लिए फिल्टर करने या उसका परीक्षण करने की कोई व्यवस्था थी।

डीएमआरसी के निर्माण स्थल तुगलक रोड पर मज़दूरों

कमिटी के एक सदस्य के अनुसार, ''जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में लेबर कॉलोनी की दयनीय स्थिति को देखकर ऐसा लग रहा था कि यहाँ मज़दूर जानवरों के जैसे बदतर हालात में रह रहे थे।'' इन्होंने रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा सौ साल पहले लिखी गई *'इबोर फिरू मोर'* की कुछ पंक्तियाँ भी याद कीं–

''यह बहुत गहरी, अँधेरी दुनिया है
गरीब, हीन, सिकुड़ी हुई, बंद अँधेरी कोठरियों की दुनिया''

को पीने के लिए साफ पानी नहीं मिल रहा था। मज़दूरों ने बताया कि उनके कैंप में बहुत ज़्यादा गंदगी भी थी। दिल्ली विश्वविद्यालय में एमसीडी द्वारा सड़क के दोनों तरफ नाली और फूटपाथ बनाने का काम किया जा रहा था। यहाँ पर सड़क के किनारे कपड़ों और प्लास्टिक से झुग्गियाँ बनी हुई थीं और मज़दूरों ने इन्हें अपने खर्चे से बनाया था। यहाँ मज़दूर ऐसी परिस्थिति में रह रहे थे जो उनकी सेहत के लिए बहुत ही नुकसानदायक था। यहाँ इनके लिए बिजली, शौचालय, नहाने की जगह, पीने के लिए साफ पानी, स्वास्थ्य सेवा या बच्चों के लिए क्रैश की कोई व्यवस्था नहीं थी। वे शौचालय के लिए नज़दीक के पार्क का प्रयोग कर रहे थे और महिलाएँ अपनी झुग्गियों में पर्दा डालकर नहाती थीं। ऐसी परिस्थिति में रहते हुए यदि वे बीमार हो जाते तो उन्हें अपने खर्च से ही अपना इलाज कराना था। एक मज़दूर ने बताया कि गंदे पानी के कारण बच्चे बहुत ज़्यादा बीमार हो रहे हैं और उनके इलाज के लिए कोई डॉक्टर नहीं है।

पोलो ग्राउंड के पास रह रहे मज़दूरों में से एक मज़दूर ने बताया कि एक कमरे में औसतन 10 लोग रह रहे हैं। कैम्प में तकरीबन 400 झुग्गियाँ थीं। इनकी दीवार लकड़ियों से बनी थी और छत टीन की थी। कमरों में रोशनदान या खिड़कियाँ नहीं थी। यहाँ झुग्गियों के पास ही कई बड़े–बड़े गहरे गड्ढे थे। चूंकि यहाँ गंदे पानी को बाहर निकालने की कोई व्यवस्था नहीं थी, इसलिए इनका उपयोग गंदे पानी को निपटाने के लिए किया जाता था। यह आस–पास खेलने वाले बच्चों के लिए बहुत ही खतरनाक था। अधिकारियों ने कहा कि वे बाद में इन गड्ढों को भर देंगे। कैम्प में नहाने के लिए पीछे की ओर एक स्थान बनाया गया था। लेकिन चूंकि यह बहुत ही असुरक्षित और गंदा था, इसलिए महिलाएँ अपनी झुग्गियों के नज़दीक कपड़ा डालकर नहाती थीं। यहाँ 400 परिवारों के लिए सिर्फ 9 शौचालयों की व्यवस्था थी। इनमें से सिर्फ 2 शौचालय महिलाओं के लिए थे। यहाँ किसी भी तरह के स्वास्थ्य सेवा की कोई व्यवस्था नहीं थी। कैम्प के पीछे की हालत बहुत ही खराब थी। यहाँ एक खुली नाली का पानी जमा था और इससे बहुत ज़्यादा बदबू फैलती थी। इस खुली नाली का पानी कैम्प की एक गली से आता था, जिसमें 9 शौचालय थे और नहाने के लिए एक बाथरूम जैसा कमरा था। यहाँ पूरी व्यवस्था ही अस्त–व्यस्त थी।

आर. के. खन्ना स्टेडियम में मज़दूरों के रहने की व्यवस्था बहुत ही असंतोषजनक थी। यहाँ बहुत ही छोटे और अंधेरे कमरे में दो लोगों को रखा गया था। कैम्प में 4 और कार्य–स्थल पर दो शौचालय थे। यहाँ किसी तरह की स्वास्थ्य सेवा या दूसरी मेडिकल सुविधाएँ नहीं थी और कोई कैंटीन भी नहीं थी। सिर्फ चाय की एक छोटी सी दुकान थी।

6) दावे और शिकायतें

न्यूनतम वेतन अधिनियम के अंतर्गत 2007–8 और 2008–9 में बहुत से मज़दूरों ने दावे दायर किये। लेकिन इन मामलों के संबंध में फैसला/निपटारा/बचे हुए पैसे का वितरण नहीं किया गया। इसके अलावा, अप्रवासी मज़दूरों को गैरकानूनी तरीके से भर्ती करने, गैरकानूनी तरीके से कब्ज़े में रखने और उनकी बकाया राशि का भुगतान न करने के बारे में भी बहुत सी शिकायतें दर्ज कराई गईं। लेकिन इन शिकायतों पर कोई कार्रवाई नहीं की गई थी। वर्कमेन कम्पेनसेशन ऐक्ट के अंतर्गत मुआवज़ा आयुक्त (कमिशनर वर्कमैन कंपंसेशन) के न्यायालय में मज़दूरों के बहुत से मामले लंबित पड़े हुए थे। इन मामलों की गंभीरता और इन्हें जल्द–से–जल्द निपटाने की ज़रूरत पर ध्यान नहीं दिया गया।

7) कुछ अन्य महत्वपूर्ण पहलू

– कमिटी ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि उसका ध्यान इस ओर भी दिलाया गया था कि याचिकाकर्त्ताओं और इस क्षेत्र में काम करने वाले दूसरे गैर सरकारी संगठनों (एनजीओ) की ओर से संबंधित अधिकारियों को चिट्ठियाँ लिखकर उनका ध्यान इन पहलूओं की ओर दिलाने की कोशिश की गई। लेकिन अधिकारियों ने या तो इन चिट्ठियों का जवाब नहीं दिया या आधे–अधूरे तरीके से इनका जवाब दिया।

– मॉनिटरिंग कमिटी ने इस बात पर ज़ोर दिया कि उनके द्वारा जिन निर्माण–स्थलों का दौरा किया गया था उनमें से सिर्फ एक निर्माण–स्थल पर बच्चों के लिए क्रैश की व्यवस्था की गई थी।

– तकरीबन सभी मुख्य ठेकेदार श्रमिक ठेकेदारों की सेवा का उपयोग कर रहे थे। इस संदर्भ में मुख्य ठेकेदारों ने इन श्रमिक ठेकेदारों के बारे में कोई जानकारी लेने की कोशिश नहीं की। इन्होंने इस बात पर भी ध्यान नहीं दिया कि इन श्रमिक ठेकेदारों को 'इंटरस्टेट माइग्रेंट वर्कमेन (रेग्युलेशन ऑफ इम्पलॉयमेंट एंड कंडीशन्स ऑफ सर्विस)

ऐक्ट, 1979' के अंतर्गत लाइसेंस मिला है या नहीं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रमुख नियोक्ताओं और ठेकेदारों/उप ठेकेदारों को श्रम कानूनों के प्रावधानों की जानकारी नहीं थी। मसलन, उन्हें 'पेमेंट ऑफ वेजेस ऐक्ट', 'मिनिमम वेजेस ऐक्ट', 'कॉन्ट्रेक्ट लेबर (रेग्युलेशन एंड एबोलिशन ऐक्ट)', 'इंटरस्टेट माइग्रेंट वर्कमेन (रेग्युलेशन ऑफ इम्पलॉयमेंट एंड कंडीशन ऑफ सर्विस) ऐक्ट', 'इक्वल रेम्युनेरेशन ऐक्ट, बिल्डिंग एंड अदर कंस्ट्रक्शन्स वर्कर्स (रेग्युलेशन ऑफ इम्पलॉयमेंट एंड कंडीशन्स ऑफ सर्विस) ऐक्ट' और इन कानूनों के अंतर्गत बने नियमों के बारे में बहुत कम जानकारी थी।

संक्षेप में, मॉनिटरिंग कमिटी ने याचिकाकर्ताओं द्वारा अपनी याचिका में लगाए गए निम्नलिखित आरोपों को सही पायाः

1. मज़दूरों को निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी नहीं दी जा रही थी।
2. 'ओवर टाइम' काम के लिए 'ओवर टाइम' मज़दूरी दर के हिसाब से भुगतान नहीं किया जा रहा था।
3. साप्ताहिक छुट्टी नहीं दी जा रही थी।
4. वेतन/मज़दूरी का भुगतान अनियमित और मनमाने तरीके से किया जा रहा था।
5. वेतन के भुगतान के समय मुख्य नियोक्ता उपस्थित के प्रतिनिधि उपस्थित नहीं रहते थे।
6. मज़दूरों को पहचान पत्र या रोज़गार के कोई अन्य प्रमाण नहीं दिये गये थे।
7. वैलफेयर बोर्ड में मज़दूरों का रजिस्ट्रेशन नहीं हुआ था।
8. मज़दूरों को सुरक्षा के लिए ज़रूरी चीज़ें नहीं दी गई थीं या या फिर इन चीज़ों के लिए उनकी मज़दूरी में से पैसे काटे गए थे।
9. कार्यस्थल पर मज़दूरों की सुरक्षा के संबंध में श्रम कानूनों के प्रावधानों का पालन नहीं किया जा रहा था।
10. कई कार्यस्थलों पर मज़दूरों के रहने के लिए कोई व्यवस्था नहीं की गई थी और जिन कार्यस्थलों पर ऐसी कोई व्यवस्था थी भी वहाँ रहने के हालात बेहद खराब थे।
11. पानी की आपूर्ति, बाथरूम और शौचालय और यहाँ तक कि साधारण साफ–सफाई भी कानूनी मानकों के अनुरूप नहीं थी।

उदासीनता और गैर–ज़िम्मेदारी का उदाहरण

कमिटी ने 16 मार्च 2010 को प्रतिवादियों को एक बैठक के लिए बुलाया। कमिटी चाहती थी कि श्रम कानूनों व मज़दूरों के काम करने और रहने के हालातों के संबंध में प्रतिवादी अपना पक्ष प्रस्तुत करें। इस बैठक में मुख्य श्रम आयुक्त (केन्द्र), मुख्य इंजीनियर (एमसीडी), कार्यकारी इंजीनियर (पीडब्ल्यूडी) और एनडीएमसी के निचले स्तर के एक अधिकारी के अलावा प्रतिवादियों में से किसी और ने न तो बैठक में आने की ज़रूरत समझी, न उन्होंने बैठक में नहीं आ पाने के संबंध में कमिटी को कोई संदेश भेजा और न ही उन्होंने लिखित रूप से अपने सुझाव ही भेजे। मॉनिटरिंग कमिटी ने इस व्यवहार को पूर्ण उदासीनता का उदाहरण और कमिटी की अवमानना माना।

12. अधिकांश स्थानों पर बच्चों के लिए क्रैश की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। बच्चे असुरक्षित कार्यस्थल पर घूमते हुए देखे जा सकते थे।
13. खानापूर्ति के लिए कुछ निर्माण स्थलों पर छोटे से कमरे में प्राथमिक चिकित्सा की व्यवस्था थी, लेकिन यहाँ बहुत ही कम सुविधाएँ उपलब्ध थीं। अन्य स्थानों पर इस तरह की भी कोई व्यवस्था नहीं थी।
14. नियोक्ताओं ने यह दावा किया कि वे मज़दूरों और उन्हें दी जाने वाली मज़दूरी के भुगतान का रिकार्ड रखते हैं, लेकिन वे इस तरह का कोई रिकार्ड दिखाने में नाकाम रहे। ठेकदारों ने अपने रजिस्ट्रेशन/लाइसेंस के कागज़ात, मस्टर रोल आदि भी जाँच के लिए पेश नहीं किए।

मॉनिटरिंग कमिटी द्वारा की गई सिफारिशें

मॉनिटरिंग कमिटी ने अपनी रिपोर्ट ने निम्नलिखित अल्पकालिक और दीर्घकालिक सिफारिशें कीं:

– मॉनिटरिंग कमिटी ने उच्च न्यायालय से यह आग्रह किया कि ''वह राष्ट्रमंडल खेलों की परियोजनाओं या दूसरे निर्माण कार्यों में लगे मुख्य नियोक्तों/मुख्य ठेकेदारों को यह निर्देश दें कि वे यह सुनिश्चित करें कि सभी मज़दूरों को वास्तविक रूप से न्यूनतम मज़दूरी मिले। न्यायालय इस संबंध में संबंधित अधिकारियों, अर्थात्

मुख्य श्रम आयुक्त (केन्द्रीय)/श्रम आयुक्त (दिल्ली) से भी इस बात की पुष्टि की रिपोर्ट मँगवाए।''

– ''जिन मज़दूरों को पूरी मज़दूरी नहीं दी गई है, उन्हें तुरंत पूरी मज़दूरी दी जाए।''

– ''जिन जगहों पर बैंक खाते के माध्यम से वेतन देना मुमकिन हो, वहाँ जल्द–से–जल्द ज़ीरो बैलेंस वाले बैंक खातों द्वारा वेतन भुगतान किया जाए।''

– मिनिमम वेजेस ऐक्ट के सेक्शन 20 के अनुसार मज़दूरी का भुगतान न होने या कम भुगतान होने की स्थिति में, श्रम कानून लागू करने के लिए ज़िम्मेदार राज्य और केन्द्र सरकार के अधिकारियों को – संबंधित प्राधिकारी के सामने दावा पेश करना चाहिए। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा इस प्राधिकारी को यह निर्देश दिया जाना चाहिए कि इस तरह के दावों से संबंधित मामलों को एक निश्चित समय सीमा के भीतर निपटाया जाए।''

– ''केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा घोषित न्यूनतम मज़दूरी की दरों में अंतर को खत्म किया जाना चाहिए।''

– कमिटी ने न्यायालय से यह आग्रह किया कि ''वह केन्द्र और राज्य – दोनों ही स्तर के नियंत्रकों यानी इंस्पैक्शन महानिदेशक (डीजी) को यह स्पष्ट निर्देश दे कि वे इस बात पर नजर रखें कि कानून द्वारा निर्धारित सुरक्षा उपायों को लागू किया जा रहा है या नहीं। इसके अलावा, इन्हें इस संबंध में उठाए गए कदमों के बारे में माननीय न्यायालय को नियमित रूप से रिपोर्ट भी देनी चाहिए।''

– कमिटी ने न्यायालय से यह आग्रह किया कि वह ''सभी मुख्य नियोक्ताओं/मुख्य ठेकेदारों को यह निर्देश दे कि वे कानून के प्रावधानों के अनुसार जल्द–से–जल्द सभी मज़दूरों के लिए काम करने और रहने की सुरक्षित और साफ–सुथरी व्यवस्था करें।''

– कमिटी ने न्यायालय से यह आग्रह किया कि ''वह 'वैलफेयर बोर्ड' को यह निर्देश दे कि वह सभी निर्माण मज़दूरों के रजिस्ट्रेशन के लिए एक समयबद्ध कार्यक्रम शुरू करे। यदि ज़रूरत हो तो इसके लिए मज़दूरों के बीच एक व्यापक अभियान भी चलाया जा सकता है और उन्हें आसानी से समझ में आने वाली भाषा में इसके महत्व की जानकारी दी जा सकती है।''

– मॉनिटरिंग कमिटी ने न्यायालय से यह आग्रह किया कि ''वह श्रम कानूनों के प्रावधानों का उल्लंघन करने वालों को सख्त सजा दे, जो दूसरे लोगों के लिए सबक बने।''

– कमिटी ने न्यायालय से यह आग्रह भी किया कि वह नियमित निगरानी की व्यवस्था करे जिससे पता चले कि माननीय न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों का पालन हो रहा है या नहीं।

रिपोर्ट में जिन दीर्घकालिक मुद्दों को उठाया गया है उनका गहनता से अध्ययन करने और उन पर अमल करने की ज़रूरत है। मसलन,

– ठेकेदारी व्यवस्था को खत्म करके मज़दूरों की भर्ती की प्रक्रिया पर नए सिरे से विचार करना, परियोजना के लिए भूमि आबंटित करने के समय ही मज़दूरों के रहने की व्यवस्था करने के लिए भूमि आबंटित करना, महिलाओं की भर्ती और उनकी बुनियादी ज़रूरतों के हिसाब से सुविधाएँ उपलब्ध कराना, छोटे बच्चों के लिए बाल घरों की व्यवस्था करना, और इन सबसे बढ़कर केन्द्र और राज्य – दोनों ही स्तरों की सरकारों के अधिकारियों को इन सभी मुद्दों पर काम करने वाले सामाजिक संगठनों की बातों को गंभीरता से लेने और उनके साथ मिलकर काम करने की व्यवस्था करना।''

– ''सीपीडब्ल्यूडी, पीडब्ल्यूडी आदि एजेंसियों द्वारा सबसे कम बोली लगाने वालों को जारी किए जाने वाले विभिन्न टेंडरों और काम के आदेशों में यह उपबंध भी जोड़ना चाहिए कि उन्हें श्रम कानूनों और इस संदर्भ में समय–समय पर न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों का भी पालन करना होगा।''

2. न्यायालय की कार्यवाही

3 फरवरी 2010 को इस मामले की पहली के समयं न्यायालय द्वारा मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी न देने, 'ओवर टाइम' और रहन–सहन के स्तर और काम की परिस्थितियों से संबंधित मुद्दे उठाए गए। प्रतिवादियों ने कहा कि ये बातें सुनिश्चित करना बहुत मुश्किल है क्योंकि मज़दूरों के पास कोई स्थायी पता नहीं है। याचिकाकर्ताओं ने यह सुझाव दिया कि मज़दूरों को पहचान पत्र जारी करके इस समस्या को हल किया जा सकता है। इस पर प्रतिवादियों ने कहा कि सभी मज़दूरों को पहचान पत्र दिये जा चुके हैं (चुँकि इस समय याचिकाकर्त्ताओं ने मज़दूरों की अनुमानित संख्या 17000 बताया था, अतः इस आधार पर प्रतिवादियों ने सभी 17000 मज़दूरों को पहचान पत्र दिए जाने का दावा किया)। न्यायालय ने इसकी जाँच का जिम्मा मॉनिटरिंग कमिटी को सौंप दिया। आगे चलकर प्रतिवादियों का यह दावा पूरी तरह से गलत साबित हो गया क्योंकि मॉनिटरिंग कमिटी ने पाया कि अधिकांश मज़दूरों को पहचान पत्र जारी नहीं किये गये थे। इसी सुनवाई में उच्च न्यायालय ने वैलफेयर बोर्ड को भी यह निर्देश दिया था कि वह कानून के विभिन्न प्रावधानों के अनुसार विशेष बैठकें करे और यह सुनिश्चित करे कि निर्माण कार्य में लगे सभी मज़दूरों को पहचान पत्र मिलें। न्यायालय ने बोर्ड को यह निर्देश भी दिया कि वह न्यायालय द्वारा गठित मॉनिटरिंग कमिटी के निर्देशों का पालन करे। इसके बाद, फरवरी के महीने में खुद कमिटी ने बोर्ड को एक परामर्शी नोट भेजा। इसमें अन्य बातों के अलावा इस बात पर ज़ोर दिया गया कि वह यह सुनिश्चित करे कि निर्माण कार्य में लगे सभी मज़दूरों को पहचान पत्र जारी किये जाएं और बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के विभिन्न प्रावधानों और उनके अंतर्गत बने नियमों का पालन हो।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है 17 मार्च 2010 को मॉनिटरिंग कमिटी ने अपने सुझावों के साथ 116 पृष्ठों की रिपोर्ट न्यायालय को सौंपी। 7 अप्रैल को दिल्ली उच्च न्यायालय के कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश मदन बी. लोकूर और न्यायामूर्ति मुक्ता गुप्ता की खण्डपीठ ने दिल्ली सरकार को एक नोटिस जारी किया। इसमें दिल्ली सरकार से यह पूछा गया कि वह स्पष्ट रूप से बताए कि रिपोर्ट की किन सिफारिशों को न्यायालय द्वारा कोई निर्देश दिए बिना सीध ो तौर पर लागू किया जा सकता है। न्यायालय ने यह आदेश भी दिया कि इन सिफारिशों को दिल्ली सरकार द्वारा अपने–आप ही लागू किया जाना चाहिए। न्यायालय ने यह भी कहा कि यदि कुछ ऐसी सिफारिशें हैं जिन पर विचार–विमर्श की ज़रूरत है, तो उनके बारे में बताया जाना चाहिए। न्यायालय ने स्पष्ट किया कि वह ऐसी सिफारिशों पर दोनों पक्षों के विद्वान वकीलों से विचार–विमर्श करने के बाद ही निर्देश जारी करेगा। राज्य के वकील ने यह वादा किया कि वे 4–5 दिनों के भीतर अपना जवाब दाखिल कर देंगे।

इसी खण्डपीठ ने 15 अप्रैल 2010 को सभी प्रतिवादियों यानी भारत केन्द्र, सीपीडब्ल्यूडी, डीडीए, एनडीएमसी, एमसीडी, डीआईएएल, डीएमआरसी और दिल्ली सरकार को यह निर्देश दिया कि वे दो हफ्ते के भीतर एक शपथ–पत्र दाखिल करें। इस शपथ–पत्र में इन सभी को यह बताना था कि वे राष्ट्रमंडल खेलों से संबंधित किन–किन परियोजनाओं पर काम कर रहे हैं। इसके अलावा उन्हें अपने शपथ–पत्र में इन परियोजनाओं में शामिल सभी कॉन्ट्रेक्टरों के मुख्य अधिकारियों के नाम और पते भी बताने थे।

प्रतिवादियों को यह निर्देश भी दिया गया कि वे इन सूचनाओं के अलावा सभी परियोजनाओं में नियुक्त ठेकेदारों से वहाँ काम करने वाले सभी मज़दूरों की सूची हासिल करें। इन सभी सूचनाओं के एकत्रित हो जाने के बाद श्रम विभाग (दिल्ली सरकार) बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के अनुसार इन मज़दूरों को रजिस्टर करवाने तथा पास–बुक जारी करने के लिए कदम उठाए।

28 अप्रैल को इस मामले की अगली सुनवाई हुई। इस समय तक किसी भी प्रतिवादी ने शपथ–पत्र दाखिल नहीं किया था। उन्होंने अदालत को यह आश्वासन दिया कि वे अगले दो–तीन दिनों के भीतर शपथ–पत्र दाखिल कर देंगे। 5 मई को अगली सुनवाई हुई। इस दिन न्यायालय ने जीएनसीटी दिल्ली को फिर से यह ओदश दिया कि वह विभिन्न एजेंसियों से समन्वय करके पास–बुक जारी करने की प्रक्रिया पूरी करे।

26 मई को अगली सुनवाई में नये मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा और न्यायमूर्ति मदन बी. लोकूर की खण्डपीठ ने रजिस्ट्रेशन की धीमी प्रक्रिया के लिए प्रतिवादियों को आड़े हाथों लिया। खण्डपीठ ने इन्हें यह आदेश दिया कि सभी मज़दूरों का जल्द–से–जल्द रजिस्ट्रेशन किया जाए और उन्हें पास–बुक और पहचान पत्र दिये जाएँ।

7 जुलाई को एक और सुनवाई हुई। इस दिन भी मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा और न्यायमूर्ति मनमोहन ने संबंधित अधिकारियों से मज़दूरों के रजिस्ट्रेशन से संबंधित औपचारिकताओं को पूरा करने के लिए कहा। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि मज़दूरों को जल्द–से–जल्द पास–बुक जारी की जानी चाहिए, जिससे वे रजिस्ट्रेशन से मिलने वाली सुविधाओं का फायदा उठा सकें। इस आदेश में कहा गया कि यह काम व्यवस्थित तरीके से किया जाए और हर निर्माण स्थल पर जाकर मज़दूरों के बारे में सूचनाएँ एकत्रित की जाएँ तथा उनका रजिस्ट्रेशन किया जाए। जीएनसीटी दिल्ली को यह निर्देश दिया गया कि वह इस काम को करने के लिए तीन अधिकारियों की एक समिति गठित करे जो हर निर्माण–स्थल पर जाकर वहाँ कैम्प लगाए। न्यायालय ने यह भी निर्देश दिया कि इस प्रक्रिया में मदद करने के लिए 'दिल्ली लीगल सर्विस अथॉरिटी' (डीएलएसए) के तीन वकीलों को भी नियुक्त किया जाए।

5 और 7 जुलाई के बीच प्रतिवादियों ने सैकड़ों पृष्ठों के शपथ–पत्र दाखिल किये। इन शपथ–पत्रों में मुख्य रूप से ठेकेदारों और उनके द्वारा विभिन्न परियोजनाओं में काम पर लगाए गए मज़दूरों के नामों का उल्लेख किया गया था। शपथ–पत्रों में आधी–अधूरी और कई जगह गलत व अप्रासंगिक सूचनाएँ दी गई थीं। उदाहरण के लिए दिल्ली सरकार द्वारा दाखिल किया गया शपथ–पत्र 230 पृष्ठों का था। इनमें से 203 पन्नों में ऐसी सूचनाएँ दी गई थीं जिनका राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों से कोई लेना–देना नहीं था। प्रतिवादियों के उदासीन और टाल–मटोल वाले रवैये के कुछ दूसरे उदाहरण इस प्रकार हैं:

– आहलूवालिया कॉन्ट्रेक्टस कंपनी ने मार्च 2010 में मॉनिटरिंग कमिटी को यह सूचना दी थी कि राष्ट्रमंडल खेल गाँव निर्माण स्थल पर कुल 5,000 मज़दूर काम कर रहे हैं। लेकिन इन्होंने अपने शपथ–पत्र में यह सूचना दी कि अप्रैल 2010 में मज़दूरों की कुल संख्या 2,349 थी। साथ ही मज़दूरों की सूची में यह सूचना नहीं दी गई कि कौन से मज़दूर कितने समय से काम कर रहे हैं। इस सूची में मज़दूरों के पते देखने से पता चलता है कि यहाँ काम करने वाले अधिकांश मज़दूर दूसरे राज्यों के ही थे, लेकिन शपथ–पत्र में *'इंटर–स्टेट माइग्रेंट वर्कमैन ऐक्ट, 1979'* का कोई ज़िक्र नहीं था।

– जीएनसीटी दिल्ली द्वारा दायर किए गए शपथ–पत्र में इस बात का उल्लेख किया गया था कि वैलफेयर बोर्ड ने स्वास्थ्य सेवा निदेशालय के साथ मिलकर 47 निर्माण–स्थलों पर 13 मोबाइल चिकित्सालयों की व्यवस्था की थी। लेकिन उन्होंने इस बात की कोई जानकारी नहीं दी कि ये चिकित्सालय आखिर कहाँ चल रहे थे।

– इसी शपथ–पत्र में कहा गया कि दुर्घटनाएँ होने पर लोगों को मुआवज़ा दिया गया। यह बताया गया कि निर्माण कार्य के दौरान 45 दुर्घटनाएँ हुईं जिसमें 43 मज़दूरों की मौतें हुई और इसका मुआवाज़ा उनके परिवार वालों को दिया गया। इसके अलावा, दो घायल लोगों को भी मुआवज़ा दिया गया। यह मुआवज़ा श्रम विभाग के उप–श्रम आयुक्त द्वारा *'वर्कमेन्स कॉमपेन्सेशन ऐक्ट'* के अंतर्गत दिया गया। लेकिन न तो दुर्घटना के शिकार हुए मज़दूरों के नाम बताए गए और न ही यह बताया गया कि किस मज़दूर के परिवार को कितना मुआवज़ा दिया गया। यह बात समझ से बाहर है कि जो नियोक्ता बड़े पैमाने पर कानूनों के उल्लंघन के आरोपों का सामना कर रहे हैं, वे किसी भी ऐसी जानकारी को क्यों छिपाएँगे, जिससे उनका अपराध हल्का हो। ऐसे में यह शक होता है कि मुआवज़ा दिए जाने के इन दावों की सच्चाई क्या है। इस शपथ–पत्र में यह भी बताया गया कि दिल्ली सरकार के श्रम विभाग ने उन तीन निर्माण स्थलों पर काम करने वाले ठेकेदारों के खिलाफ 'चालान' किया है, जहाँ मॉनिटरिंग कमिटी को बहुत सारी अनियमितताएँ देखने को मिली थीं। ये तीन निर्माण स्थल हैं: अफ्रीका ऐवेन्यू, सिरी फोर्ट (रोड के किनारे का क्षेत्र) और आर. के. खन्ना टेनिस स्टेडियम के बाहर का क्षेत्र। लेकिन यहाँ भी इनके खिलाफ की गई कार्रवाई के

बारे में विस्तार से कोई जानकारी नहीं दी गई। इस तरह की सूचनाओं के बारे में विस्तार से कोई जानकारी न देने के कारण इन शपथ–पत्रों की विश्वसनीयता और सच्चाई पर सवालिया निशान लग जाते हैं।

– डीएमआरसी ने अपने शपथ पत्र द्वारा न्यायालय को यह सूचना दी कि उसने 114 करोड़ रूपये 'सैस' के रूप में जमा किए हैं और उसके 2,800 मज़दूर वैलफेयर बोर्ड में पंजीकृत हैं। यहाँ इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि डीएमआरसी द्वारा बताई गई रजिस्टर्ड मज़दूरों की संख्या का कोई महत्व नहीं है, क्योंकि इसने काम करने वाले कुल मज़दूरों की संख्या का उल्लेख नहीं किया था। इसके अलावा, मज़दूरों को दिए गए कल्याणकारी फायदों के बारे में भी कुछ नहीं बताया गया था। ध्यान रहे कि महज़ रजिस्ट्रेशन कर दिए जाने का भी कोई फायदा नहीं है अगर मज़दूरों को कोई सुविधाएँ ही न दी जा सकें।

– डीएमआरसी के शपथ–पत्र में यह भी बताया गया था कि उनकी अपनी एक 'लेबर वैलफेयर फंड' योजना है जिसमें तकरीबन एक करोड़ रूपये हैं। इसमें यह भी बताया गया था कि इस योजना के अंतर्गत दुर्घटनाओं में मारे गए 65 मज़दूरों के परिवारों को सहायता दी जा रही थी। हालांकि डीएमआरसी ने इस समय काम के दौरान हुई मौतों की कोई जानकारी नहीं दी थी लेकिन आगे चलकर 1 सितम्बर को इसने दुर्घटना में मरे सभी मज़दूरों के नाम, उनको दिए गए मुआवजे और लंबित मामलों की सूची न्यायालय को सौप दी। इस सूची में भी चौंकाने वाली बात सामने आयी। इसके अनुसार 2003 से 2010 तक मैट्रो के निर्माण में कुल 109 मज़दूरों की मौत हुई हैं। इसमें प्रथम चरण के निर्माण के दौरान 55 तथा दूसरे चरण के निर्माण के दौरान 54 मज़दूरों के मौत की बात स्वीकार की गई है। डीएमआरसी द्वारा दी गई सूची में वर्ष 2009 में दुर्घटना के शिकार हुए मज़दूरों के परिजनों को साढे 9 लाख तक मुआवजा दिए जाने की बात बतायी गई है। इन मामलों में परिजनों को वास्तव में इतना रूपया मिला या नहीं इसकी जाँच करने की ज़रूरत है।

– डीडीए और सीपीडब्ल्यूडी ने यह जानकारी नहीं दी कि राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण–स्थलों पर काम कर रहे इसके मज़दूरों में से कितने मज़दूरों का रजिस्ट्रेशन हुआ है।

– सीपीडब्ल्यूडी ने मज़दूरों के नामों की सूची नहीं दी।

ऐसा लगता है कि प्रतिवादियों का मुख्य मकसद मोटे–मोटे दस्तावेज़ देकर याचिकाकर्ताओं और न्यायालय को भ्रमित करना था। उन्हें इस बात की कोई परवाह नहीं थी कि श्रम कानूनों के खुल्लम–खुल्ला उल्लंघन से होने वाले अन्यायों को किस तरह ठीक किया जाए। इसलिए, प्रतिवादियों की तरफ से कानून के प्रति उदासीनता और असम्मान दिखाया गया। इस कारण न्यायालय द्वारा दिए गए बहुत से अच्छे आदेशों का मज़दूरों को कोई फायदा नहीं मिला। न्यायालय ने अपने 7 अप्रैल के आदेश में मॉनिटरिंग कमिटी की सिफारिशों को लागू करने के आदेश दिए थे, लेकिन किसी भी शपथ–पत्र में इसके बारे में कुछ नहीं कहा गया। दरअसल, ये शपथ–पत्र लोगों की आँखों में धूल झोंकने की कोशिश से ज़्यादा कुछ नहीं थे। इस तरह के झूठे शपथ–पत्र दायर करके प्रतिवादियों ने न्यायालय की अवमानना की है।

3. खेलों के शुरू होने तक की ज़मीनी हकीकत पर एक नज़र

मॉनिटरिंग कमिटी की रिपोर्ट आने के पहले और बाद न्यायालय द्वारा दिए गए आदेशों, और प्रिंट तथा इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों में इनके अत्यधिक प्रचार से याचिकाकर्ताओं को यह उम्मीद बंधी थी कि ज़मीनी स्तर पर स्थिति में कुछ हद तक सुधार होगा। उन्हें कम–से–कम यह उम्मीद थी कि राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण स्थलों पर पहले की तुलना में श्रम कानूनों का ज़्यादा सख्ती और सावधानी से पालन किया जाएगा। उन्हें यह भी लगा था कि भले ही मज़दूरों को बकाया पिछला वेतन न मिले, लेकिन कम से कम अब उन्हें तय की गई न्यूनतम मज़दूरी, साप्ताहिक छुट्टी, 'ओवर टाइम' आदि मिलने लगेगा और उनके रहन–सहन के स्तर में सुधार होगा।

अपने दिल में यह उम्मीद लेकर पीयूडीआर की टीम ने मई से सितम्बर तक राष्ट्रमंडल खेलगाँव, दिल्ली विश्वविद्यालय और आर. के. खन्ना टेनिस स्टेडियम के बाहर वाले कार्य स्थल का दौरा किया जहाँ सड़क

सौंदर्यीकरण का काम चल रहा था। इसके अलावा हम श्रम विभाग द्वारा मज़दूरों के रजिस्ट्रेशन के लिए लगाए गए विभिन्न कैंपों में भी शामिल हुए।

हमें बहुत ही निराशा के साथ कहना पड़ रहा है कि कमिटी की रिपोर्ट आने के बाद से खेलों के शुरू होने के समय के बीच न्यायालय के बहुत सारे आदेशों के बाद भी श्रम कानूनों का उल्लंघन उसी स्तर पर जारी रहा जैसा कि पहले हो रहा था। यानी केस की पूरी कार्यवाही से ज़मीनी स्तर पर कोई खास बदलाव नहीं आया है।

काम करने और रहने के हालात

आर. के. खन्ना टेनिस स्टेडियम के निकट सड़क सौंदर्यीकरण में काम कर रहे मज़दूरों ने बताया कि वे हर रोज साढ़े आठ घंटे (9 बजे से लेकर 5.30 तक) काम करते हैं और उन्हें 120 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से मज़दूरी मिल रही है। साप्ताहिक छुट्टी नहीं मिल रही थी, उन्हें पहचान पत्र नहीं दिया गया था और रजिस्ट्रेशन के बारे में भी कोई जानकारी नहीं थी। वे अभी भी रोड के किनारे बनी तारपोलीन की झुग्गियों में रह रहे थे । शौचालय या बाथरूम की कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। स्टेडियम के अंदर काम करने वाले मज़दूरों को भी अधिकतम 150 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से मज़दूरी दी जा रही थी, जबकि इस समय अकुशल मज़दूरों की न्यूनतम मज़दूरी 203 रूपये थी। महिला मज़दूरों को इसी काम के लिए सिर्फ 110 रूपये ही दिए जा रहे थे। मज़दूरों को कोई साप्ताहिक छुट्टी नहीं मिल रही थी।

दिल्ली विश्वविद्यालय में एमसीडी और पीडब्ल्यूडी के निर्माण–स्थलों पर न्यायालय के आदेश के बावजूद भी मज़दूरों को *मिनिमम वेजेस ऐक्ट* के अनुसार न्यूनतम मज़दूरी नहीं दी जा रही थी। रिज के इलाके में रोड के किनारे झुग्गियों में रहने वाले मज़दूरों से बातचीत के दौरान, बिहार के भागलपुर शहर से आई एक महिला मज़दूर ने बताया कि पिछले 8 महीने से उसे 110 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से मज़दूरी मिल रही थी। उसका पति एक कुशल मज़दूर है, लेकिन उसे भी 10 घंटे (सुबह 8 बजे से लेकर शाम में 6 बजे तक) के काम के लिए प्रतिदिन सिर्फ 150 रूपये मिल रहे थे। इन मज़दूरों को कोई स्वास्थ्य सुविधाएँ भी नहीं मिल रही थीं। यहाँ कोई शौचालय या बाथरूम नहीं था और बच्चों के लिए कोई क्रैश भी नहीं था। इस कारण मज़दूरों के बच्चे व्यस्त रोड के किनारे ही खेलते रहते थे। उल्लेखनीय है कि इसी जगह पर मॉनिटरिंग कमिटी ने भी अपनी रिपोर्ट में एक सड़क दुर्घटना में एक महिला मज़दूर के मौत हो जाने की बात बतायी है जिसकी मृत्यु की संभवतः सूचना भी दर्ज नहीं की गई (एमसी रिपोर्ट, पृ. 77)। लेकिन इसके बावजूद यहाँ मज़दूरों और उनके बच्चों की सुरक्षा के लिए कोई प्रबंध नहीं किए गए थे। पटेल चेस्ट के नज़दीक बनी झुग्गियों में रहने वाले और वहाँ के रोड सौंदर्यीकरण परियोजना में काम करने वाले मज़दूरों ने बताया कि उन्हें 150 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से मज़दूरी का वादा किया गया था। खालसा कॉलेज के स्टेडियम में काम करने वाले कुछ मज़दूरों ने बताया कि वे तीन महीने के ठेके पर दिल्ली आए थे और ठेकेदार ने इन्हें गाँव में ही 150 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से पैसे दे दिये थे। ठेकेदार ने इनके लिए खाने की भी व्यवस्था की थी। लेकिन इन्हें सुबह 8 बजे से लेकर शाम में 6 बजे तक (यानि 10 घंटे) काम करना पड़ता था। मध्य प्रदेश के कुछ मज़दूरों ने पीयूडीआर को बताया कि उन्हें प्रतिदिन सिर्फ 120 रूपये मिल रहे थे।

यह सच है कि श्रम विभाग पोस्टर आदि लगाकर मज़दूरों से यह आग्रह कर रहा था कि वे कानूनों के उल्लंघन के बारे में जानकारी दें। लेकिन पीयूडीआर मज़दूरों के एक ऐसे समूह से भी मिला जो अपनी शिकायत लेकर अशोक विहार के लेबर ऑफिस में गया था, लेकिन वहाँ उनकी शिकायत दर्ज़ नहीं की गई। इस बात पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि मज़दूरों को यह डर होता है कि अगर वे शिकायत करेंगे तो उनकी नौकरी चली जाएगी। इस कारण सिर्फ कुछ मज़दूर ही शिकायत करने के लिए आगे आ पाते हैं। यहाँ पर जिन मज़दूरों ने शिकायत करने की कोशिश की, उन्हें तुरंत काम से निकाल दिया गया।

30 जून 2010 को दिल्ली विश्वविद्यालय में मज़दूरों के रजिस्ट्रेशन के लिए पहुँचे श्रम विभाग (जीएनसीटी दिल्ली) के दो अधिकारियों के समक्ष सड़क के किनारे काम कर रहे कुछ मज़दूरों ने बताया कि उन्हें 130 रूपये ही मज़दूरी मिलती है। लेकिन इन अधिकारियों ने कहा कि यह कार्य स्थल केन्द्रीय श्रम विभाग के अंतर्गत है इसलिए

वे इस मामले में कुछ नहीं कर सकते हैं। विभिन्न निर्माण स्थलों पर मज़दूरों के रजिस्ट्रेशन के लिए लगाए गए तकरीबन सभी कैंपों में मज़दूरों ने कम वेतन दिए जाने की बात बतायी। लेकिन इसपर श्रम विभाग ने कोई कार्यवाई नहीं की।

तालकटोरा स्टेडियम में भी मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी नहीं दी जा रही थी। इसकी वजह से 20 जून को यहाँ मज़दूरों ने काम रोक दिया। उनकी माँग थी कि उन्हें कानून द्वारा तय किए गए दर के हिसाब से मज़दूरी दी जाए।

राष्ट्रमंडल खेलगाँव निर्माण स्थल पर मध्य प्रदेश के सागर जिले के कुछ मज़दूरों ने, जो सिर्फ दस–बारह दिन पहले ही यहाँ आए थे, पीयूडीआर को बताया कि उनसे कहा गया था कि उन्हें प्रतिदिन 150 रूपये के हिसाब से मज़दूरी दी जाएगी और उन्हें रोज 8 घंटे काम करना होगा। लेकिन उन्हें 8 बजे से लेकर शाम में 5:30–6 बजे तक काम करना पड़ रहा था। कई बार तो इनका काम 7 बजे ही शुरू हो जाता था। यहाँ मज़दूरों को साप्ताहिक 'खर्चे' के रूप में मज़दूरी का भुगतान किया जा रहा था। उन्हें कोई पहचान–पत्र नहीं दिया गया था। ये मज़दूर

मज़दूरों की संख्या को लेकर अनिश्चितता

यह सुनिश्चित करने के लिए कि श्रम कानूनों को सही तरीके से लागू किया जा सके, सबसे पहले इस बात की जानकारी ज़रूरी है कि कुल कितने मज़दूर काम कर रहे हैं। लेकिन यह एक आश्चर्यजनक स्थिति है कि सरकारी एजेंसियों को इस बारे में कोई अंदाजा नहीं है कि राष्ट्रमंडल खेलों के विभिन्न निर्माण स्थलों पर कुल कितने मज़दूर काम करते रहे थे।

इसका नतीजा यह हुआ कि एक ही एजेंसी यानी इंस्पैक्शन विभाग ने विभिन्न निर्माण स्थलों पर काम करने वाले मज़दूरों की अलग–अलग संख्या बताई। इसके द्वारा मई में न्यायालय में दाखिल किए गए शपथ–पत्र में दो तरह की सूचनाएँ दी गईं। एक सूचना के अनुसार उस समय खेलों से संबंधित निर्माण कार्य में कुल 30,935 मज़दूर काम कर रहे थे। दूसरी ओर इसने एक अन्य सूची भी पेश की जिसमें यह बताया गया था कि इस निर्माण कार्य में कुल 40,392 मज़दूर काम कर रहे थे। इन दोनों के बीच तकरीबन 25 प्रतिशत का अंतर था।

इसके बाद केन्द्रीय श्रम विभाग से इस परियोजना में तकरीबन 70,500 मज़दूरों के काम करने की बात पता चली। 6 अक्टूबर 2010 को न्यायालय में रीजनल लेबर कमिश्नर (केन्द्र सरकार) ने भी स्वीकार किया कि इस परियोजना में 70,000 से अधिक मज़दूर काम कर रहे थे। न्यायालय ने सभी कॉन्ट्रेक्टर को मज़दूरों की सूची रीजनल लेबर कमिश्नर को मुहैया कराने का आदेश दिया। इसके बाद 10 नवंबर 2010 को न्यायालय में जमा की गई सूची के आधार पर मज़दूरों की संख्या तकरीबन 88,000 से अधिक हो गई जबकि इस समय तक कई एजेंसियों ने सूचियाँ नहीं सौंपी थीं।

सरकारी एजेंसियों के पास इस संबंध में कोई पक्के आंकड़े नहीं हैं कि राष्ट्रमंडल खेलों से संबंधित निर्माण कार्य में कुल कितने मज़दूरों ने, कितनी–कितनी अवधि के लिए काम किया। अधिकारियों द्वारा इस बुनियादी जानकारी रखने के अपने उत्तरदायित्व को गंभीरता से नहीं लेने के कारण मज़दूरों के अधिकारों पर बहुत ही नकारात्मक प्रभाव पड़े हैं। इसके साथ मज़दूरों को ठेकेदारों या नियोक्ताओं द्वारा कोई पहचान–पत्र या 'वेज स्लिप' न दिए जाने का नतीजा यह हुआ है कि मज़दूरों के पास यह दावा करने के लिए कोई सबूत नहीं हैं कि उन्होंने किसी निर्माणस्थल पर कितने समय काम किया। ऐसे में वे अपनी बकाया मज़दूरी और अन्य फायदों के संबंध में कोई भी दावा कर पाने की स्थिति में नहीं हैं। इससे नियोक्ताओं, ठेकेदारों और उप–ठेकेदारों को फायदा होता है, जो मज़दूरों को पहचान पत्र न देकर उनसे यह साबित करने का आधार छीन लेते हैं कि उन्होंने किसी जगह पर कितने समय काम किया।

निश्चित रूप से इस तरह की 'चूक' के पीछे सोची–समझी साजिश है।

निजामुद्दीन पुल के किनारे ईटों के बने घरों में रहते थे, जिनमें खिड़कियाँ तक नहीं थीं।

खेलगाँव में पिछले 6 महीने से काम करने वाले मुर्शिदाबाद के एक मज़दूर ने यह बताया कि वह रोज 10–11 घंटे काम करता है (यानी तकरीबन 3 घंटे का 'ओवर टाइम') जिसके एवज में ठेकेदार उसे हर महीने 3,000 हजार रूपये मज़दूरी और खाना देता है। कुछ अकुशल बंगाली मज़दूरों ने यह बताया कि ठेकेदार उन्हें 9–10 घंटे काम के लिए प्रतिदिन 100 रूपये मज़दूरी और खाना देता है। मज़दूरों ने बताया कि उन्हें कोई फॉर्म भी दिया गया था, लेकिन उसके बाद कुछ भी नहीं हुआ।

पीयूडीआर की टीम ने इस निर्माण स्थल के अंदर जाने की भी कोशिश की लेकिन उसे अंदर नहीं जाने दिया गया। वर्ष 2008 के अंत में एवं 2009 के आरंभ में निर्माण स्थल पर मज़दूरों के हालात की जाँच के लिए हमने इन निर्माण स्थलों के अंदर जाने की अनुमति प्राप्त करने के काफी प्रयास किए थे। हमने कई दफ्तरों के चक्कर लगाए थे लेकिन हमें कोई सफलता नहीं मिली थी। दो साल पहले की तरह हमने एक बार फिर एमआर–एमजीएफ या आहलूवालिया कॉन्ट्रेक्ट्स के अधिकारियों से निर्माण स्थल के भीतर जाने की इजाज़त माँगी। लेकिन उन्होंने हमें कोई फोन नंबर देकर वहाँ से इजाज़त लेने के लिए कहा। आखिरकार हमें बताया गया कि हम डीडीए कि इजाज़त के बिना निर्माण स्थल के भीतर नहीं जा सकते हैं। अपने पूराने अनुभवों से साफ था कि इसके लिए अब प्रयास करना व्यर्थ था।

दिल्ली विश्वविद्यालय के पोलो ग्राउंड में अगस्त सितम्बर के महीनों में जब दिल्ली में लगातार बारिश हो रही थी, गड्ढों में पानी भरा हुआ था। इन गड्ढों में बड़ी तादाद में मच्छर पनप रहे थे और कई मज़दूर और उनके बच्चे तेज़ बुखार से पीड़ित थे। उल्लेखनीय है कि इस समय दिल्ली में व्यापक स्तर पर डेंगू फैला हुआ था। फिर भी मज़दूरों के कैंप में फैले गंदगी और गड्ढों में जमे पानी की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया।

27 अगस्त को डीएलएसए एवं श्रम विभाग के अधि ाकारियों के साथ दौरे के दौरान पीयूडीआर को पता चला कि इसके ठीक एक दिन पहले 26 अगस्त की रात को एक दुर्घटना में 19 वर्षीय एक मज़दूर, (जो लोडर का काम करता था), की मौत हो गई। यह मज़दूर ज़मीन पर सोया हुआ था तथा एक ट्रक को आगे–पीछे किए जाने के दौरान उसके नीचे दब गया। इसके कुछ ही दिन पहले यहाँ स्टेडियम के अहाते में ही एक तेज़ रफ्तार से आ रही गाड़ी के नीचे आ जाने से किसी मज़दूर की 2 साल की बच्ची की मौत हो गई थी।

सितम्बर के महीने में पीयूडीआर के दल ने बारापूला पुल के आस–पास बने मज़दूरों के कैंपों का दौरा किया। मज़दूरों को रहने के लिए टीन के शेड दिए गए थे जो कि खुले नाले के साथ–साथ बने हुए थे। मज़दूरों ने पीयूडीआर की टीम को बताया कि तेज बारिश के समय नीचे की तरफ बने इनके शेड्स में पानी घुस जाता था और कई दिनों तक इन्हें गीले और नमी भरी हालत में रहना पड़ता था।

21 सितम्बर 2010 को जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम के पास बने रहे एक पैदल–पार पुल के गिर जाने से 27 मज़दूर घायल हो गए। दिल्ली सरकार ने दुर्घटना में गंभीर रूप से घायल मज़दूरों को 1 लाख रूपये तथा साधारण रूप से घायल मज़दूरों को 50 हजार रूपये देने की घोषणा की। संयोग से घटना के अगले दिन 22 सितम्बर को ही उच्च न्यायालय में केस की तारीख थी। न्यायालय ने इस राशि को बढ़ाकर गंभीर रूप से घायल मज़दूरों को 3 लाख रूपये और साधारण रूप से घायल मज़दूरों को 1 लाख रूपये दिए जाने का आदेश दिया। न्यायालय के दबाव के कारण न केवल उन्हें यह राशि मिल पायी बल्कि श्रम विभाग ने वर्कमैन कंपनसेशन ऐक्ट के तहत उन्हें मुआवजा देने की प्रक्रिया भी तेजी से चलायी। उच्च न्यायालय में दाखिल याचिका की यह एकमात्र उपलब्धि थी। ***और यह नहीं भूलना चाहिए कि यह मुआवज़ा मज़दूरों का कानूनी अधिकार है, जिसके लिए जनहित याचिका का मोहताज होना एक विडम्बना है।***

वस्तुतः जनहित बावजूद श्रम विभाग और मुख्य नियोक्ता के रूप में काम कर रही राज्य की दूसरी एजेंसियाँ इस बात को भी सुनिश्चित नहीं कर पाईं कि मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी मिले। उन्होंने उनके रहन–सहन के हालात एवं उनकी सुरक्षा पर भी कोई ध्यान नहीं दिया।

कितनी दुर्घटनाएँ और कितनी मौतें : अभी भी एक रहस्य

मई 2010 में दिल्ली सरकार के श्रम विभाग द्वारा दाखिल किए गए शपथ पत्र में राष्ट्रमंडल खेल से संबंधित परियोजना के निर्माण कार्य में कुल 45 दुर्घटनाओं की बात बतायी गई थी जिसमें से 43 मज़दूरों की मौत तथा 2 के गंभीर रूप से घायल होने की बात को स्वीकार किया गया था। संसद के मानसून सत्र के दौरान भी राज्यसभा में पूछे गए सवाल का जवाब देते हुए श्रम राज्य मंत्री श्री हरीश रावत ने बताया कि राष्ट्रमंडल खेल के निर्माण कार्य में 42 मज़दूर मारे गए हैं तथा मैट्रो के निर्माण में 18 मज़दूर घायल हुए हैं (28 जुलाई 2010, टाइम्स ऑफ इंडिया)। इसके बाद भी समाचार पत्र में कुछ मज़दूरों की मौत एवं घायल होने के समाचार प्रकाशित हुए। हम लोगों ने दिल्ली सरकार के उप श्रमायुक्त से दुर्घटना में मारे गए एवं घायल मज़दूरों के नाम, पते तथा इनको दिए गए मुआवजे की विस्तृत सूची उपलब्ध कराने की माँग की। आरंभ में तो हमें उन्होंने आश्वासन दिया कि वे हमें ये सूची मुहैया करवा देंगे। लेकिन बाद में जब हमने उनसे इसका ब्यौरा लेने के लिए सम्पर्क किया तो उन्होंने टाल–मटोल करते हुए बतलाया कि उनके पास ऐसी कोई सूची नहीं है तथा इसके लिए हमें एक–एक करके सारे रीजनल लेबर ऑफिसों में जाना होगा।

आखिरकार 12 अगस्त को हमने सूचना के अधिकार कानून के तहत दुर्घटना में मारे गए एवं घायल हुए मज़दूरों के नाम पते तथा उनके परिजनों को दिए गए मुआवजे का विस्तृत ब्यौरा माँगा। तकरीबन एक महीना पूरा होने के बाद 15 सितम्बर की तारीख को भेजा गया एक जवाब चीफ इंस्पेक्टर ऑफ फैक्टरी से प्राप्त हुआ जिसमें बताया गया था कि उनके पास इस तरह का कोई रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं है। यह तथ्य भी समझ से परे है कि आखिर इस आरटीआई आवेदन को चीफ इंस्पेक्टर ऑफ फैक्टरी को भेजा ही क्यों गया था जिनका राष्ट्रमंडल खेल के निर्माण कार्य से कोई लेना–देना ही नहीं था।

इसके बाद 24 सितम्बर को भेजा गया दूसरा जवाब हमें दक्षिणी जिला के उप–श्रमायुक्त (पुष्प भवन, पुष्प विहार, मदनगीर) कार्यालय से मिला। इसमें 21 सितंबर को जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में हुई दुर्घटना में घायल कुल 27 मज़दूरों की संख्या भेजी गयी। इसमें भी मज़दूरों के नाम, पतों, मुआवज़ों आदि का विवरण नहीं था।

तीसरा जवाब हमें केन्द्रीय जिला के उप–श्रमायुक्त कार्यालय (इम्पलॉयमेंट एक्सचेंज बिल्डिंग, पूसा कैंपस) से प्राप्त हुआ जिस पर 28 सितंबर की तारीख थी और इसे 29 सितंबर को भेजा गया था। इसमें दो मज़दूरों के मौत की बात बतायी गई थी तथा उसका विस्तृत एवं पर्याप्त विवरण दिया गया था।

इस तरह से कुल मिलाकर हमें तीन जवाब मिले जिसमें दुर्घटना में मारे गए केवल दो मज़दूरों एवं उन्हें दिए गए मुआवजे का विवरण दिया गया था। कुछ दिन और इंतज़ार करने के बाद हमने 29 सितंबर को प्राप्त उत्तर की कॉपी के साथ अपना आरटीआई आवेदन श्रमायुक्त कार्यालय के फर्स्ट ऐपेलेट अथॉरिटी को भेजा। आश्चर्य है कि इस आवेदन के भेजने के एक महीने से ज़्यादा बीत जाने के बावजूद हमें अब तक कोई जवाब नहीं मिला है।

ज़ाहिर है कि श्रम विभाग को सूचनाएँ देने में परेशानी हो रही है। यह हमारी आशंका को और भी गहरा करती है कि मज़दूरों को दोनों के अनुसार मुआवजे की राशि वितरित नहीं की गई है। यदि सब कुछ साफ होता तो विभाग को सूचना मुहैया कराने में क्या परेशानी थी। इस बीच 1 सितंबर 2010 को डीएमआरसी द्वारा मैट्रो के निर्माण के दौरान दुर्घटना में मारे गए मज़दूरों की सूची न्यायालय में सौंपी गई जिसमें अकेले मैट्रो के निर्माण में ही 109 मज़दूरों के मौत की बात को स्वीकार किया गया है।

यह इस बात के प्रति एक गंभीर चिंता उत्पन्न करता है कि जब केवल एक ही एजेंसी ने दुर्घटना में मारे गए मज़दूरों की सूची सौंपी है तथा उसमें इतने मज़दूरों के मौत की पता चला है तो दूसरी एजेंसियों द्वारा अपनी सूची सौंपने पर यह संख्या कहाँ तक पहुँचेगी।

कुल मिलाकर अभी भी यह स्पष्ट नहीं हो पाया है कि इस खेल से जुड़ी परियोजनाओं के निर्माण में कुल कितने मज़दूरों की मौत हुई, कितने घायल हुए तथा उनके परिजनों को कितना मुआवजा मिला।

वैलफेयर बोर्ड में रजिस्ट्रेशन

दिल्ली सरकार ने मई में दाखिल किए गए अपने शपथ–पत्र में बताया कि 2010 के मार्च महीने से मई के मध्य तक 3,958 मज़दूरों का रजिस्ट्रेशन हुआ। इनके अनुसार, कुल मिलाकर तब तक 29,640 मज़दूरों का पंजीकरण हो चुका था। सरकारी ऐजेंसियाँ बेशर्मी से सिर्फ संख्या बताकर भ्रम में डालने की तिकड़म में लगी रहीं और उन्होंने अपने आंकड़ों को साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं दिए। असल में, उनके द्वारा बताई गई संख्या पूरी दिल्ली में तब तक रजिस्ट्रर्ड (या पंजीकृत) हुए कुल मज़दूरों की संख्या थी। यानी दिल्ली में काम करने वाले 6–7 लाख मज़दूरों में से तब तक सिर्फ 29,640 मज़दूरों का ही रजिस्ट्रेशन किया गया था। यह भी स्पष्ट नहीं है इन मज़दूरों में से कितने मज़दूर राष्ट्रमंडल खेलों से संबंधित थे। वैलफेयर बोर्ड के 8 साल पहले अस्तित्व में होने के बावजूद केवल करीब 5 प्रतिशत मज़दूरों का ही रजिस्ट्रेशन हो पाना यह साबित करता है कि जिस बोर्ड का गठन हमारे समाज के सबसे शोषित वर्गों में से एक वर्ग के कल्याण के लिए किया गया था, वह पूरी तरह से निष्क्रिय है। न्यायालय को यह भी स्पष्ट रूप से नहीं बताया गया कि इनमें से कितने रजिस्ट्रेशन जीवित (लाइव) रजिस्ट्रेशन थे। ध्यान रहे कि रजिस्ट्रेशन के बाद किसी भी मज़दूर को तभी कोई फायदे मिल सकते हैं अगर वे लाइव रजिस्ट्रेशन हों। इसके अलावा, शपथ–पत्र में यह बात भी स्पष्ट नहीं था कि मार्च से मई तक जो 3,958 रजिस्ट्रेशन किए गए थे, उनमें से कितने राष्ट्रमंडल खेलों से संबंधित थे और कितने दूसरे तरह के निर्माण कार्यों से। इस समय तक दायर शपथ–पत्रों में मज़दूरों की जो सूची दी गई थी उससे यह स्पष्ट था कि खेल से जुड़े निर्माण–स्थलों पर काम करने वाले मज़दूरों की संख्या तकरीबन 40,392 थी (इसके बाद नवंबर 2010 तक दायर शपथ–पत्रों में मज़दूरों की संख्या 88000 से भी अधिक बतायी गयी)। इसलिए, यदि यह मान भी लिया जाए कि ये सभी नए रजिस्ट्रेशन राष्ट्रमंडल खेलों के मज़दूरों के थे, तो भी जिस दर से यह काम चल रहा था, उस हिसाब से इस प्रक्रिया के पूरा होने में कई साल तो लग ही जाते!

दिल्ली सरकार के श्रम विभाग द्वारा मई में दायर इस शपथ–पत्र में यह भी बताया गया था कि श्रम विभाग ने 1 लाख रजिस्ट्रेशन फॉर्म तथा 50 हजार पास–बुक छपने के लिए प्रैस में दिए हैं। कितनी शर्म की बात है कि इस खेल के आयोजन की घोषणा कई वर्ष पहले हो चुकी थी तथा निर्माण कार्य भी 3–4 साल से चल रहा था लेकिन श्रम विभाग ने मज़दूरों के पंजीकरण के लिए, अब तक यानी, याचिका की सुनवाई में हुए आदेशों के पहले तक, रजिस्ट्रेशन के लिए फार्म तक नहीं छपवाए थे। इस समय तक जबकि कई निर्माण स्थलों पर निर्माण कार्य पूरा हो चुका था एवं केवल फिनिशिंग का काम चल रहा था और बहुत से मज़दूर वापस लौट चुके थे या लौटने की तैयारी कर रहे थे, श्रम विभाग द्वारा रजिस्ट्रेशन फॉर्म और पास–बुक की छपाई की बात हो रही थी। साफ है कि श्रम–विभाग वैलफेयर बोर्ड में मज़दूरों के पंजीकरण के प्रति बिल्कुल ही गंभीर नहीं था तथा न्यायालय में याचिका दायर करने के बाद दबाव में महज खानापूर्ति करने का काम कर रही था।

न्यायालय के आदेश के बाद श्रम विभाग ने मज़दूरों का रजिस्ट्रेशन करने के लिए कई जगहों पर कैम्प भी आयोजित किए। पीयूडीआर एक पर्यवेक्षक के रूप में इस पूरी प्रक्रिया से जुड़ा रहा। असल में, यह पूरी प्रक्रिया भी बेमतलब और दिखावे के लिए ही थी। हर बार न्यायालय के आदेश देने के बाद श्रम विभाग कई दिनों तक मज़दूरों के पंजीकरण के लिए कुछ भी नहीं करता था। श्रम विभाग की कार्यवाई तब शुरू होती थी जब सुनवाई की तारीख नज़दीक आने को होती थी, ताकि न्यायालय में यह दिखाया जा सके कि विभाग इस दिशा में कार्य कर रहा है। उदाहरण के लिए 26 मई 2010 को उच्च न्यायालय ने श्रम विभाग को मज़दूरों के पंजीकरण के लिए कैंप आयोजित करने का आदेश दिया। लेकिन श्रम विभाग ने इस दिशा में तब तक कोई प्रयास नहीं किया जब तक कि याचिकाकर्ताओं ने श्रम विभाग को न्यायालय के आदेश के संदर्भ में पत्र नहीं लिखा। हमारे पत्र लिखने के बाद 27 मई को (न्यायालय के आदेश के एक महीने बाद) दिल्ली सरकार के श्रमायुक्त कार्यालय में उप श्रमायुक्त ने हमें मिलने के लिए बुलाया। इस बैठक में हमें मज़दूरों के रजिस्ट्रेशन से पूर्व उन्हें जागरूक करने के लिए पर्चे आदि दिखाए गए तथा 30 जून को दिल्ली विश्वविद्यालय में रजिस्ट्रेशन कैंप लगाने की बात की गई। लेकिन 30 जून को जब हम श्रम अधिकारियों द्वारा बतायी जगह पर पहुँचे

दिल्ली लीगल सर्विस अथोरिटी (डीएलएसए) की रिपोर्ट

मॉनिटरिंग कमिटी के रिपोर्ट जमा करने तथा उच्च न्यायालय द्वारा कई आदेश जारी होने के बावजूद भी राष्ट्रमंडल खेल के निर्माण स्थलों पर मज़दूरों की दशा में कोई परिवर्तन नहीं हो पाया था। अभी भी उनके न्यूनतम मज़दूरी, ओवरटाईम एवं सुरक्षा मानकों पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा था। एक ओर खेल की तारीख नजदीक आ रही थी तथा निर्माण कार्य को समय पर पूरा करने का दबाव था, दूसरी तरफ इस साल दिल्ली में रिकॉर्ड तोड़ बारिश हुई थी जो काम को पूरा करने में रुकावट बन रही थी। इन दोनों का प्रभाव मज़दूरों पर पड़ा। उन्हें बारिश में भीगकर दिन–रात काम करना पड़ रहा था। उनके रहने की जगहों पर भी बारिश के कारण ज़मीन काफी गीली रहती थी तथा कभी–कभी तो घुटनों तक पानी भरा रहता था। आस–पास पानी जमा होने के कारण इसमें मच्छर पनप रहे थे तथा बड़ी संख्या में मज़दूर बीमार पड़ रहे थे। न्यायालय के निर्देश पर दिल्ली सरकार का श्रम विभाग भी रजिस्ट्रेशन के नाम पर महज खाना–पूर्ति का ही काम कर रहा था।

उपरोक्त परिस्थितियों को देखते हुए 4 अगस्त 2010 की सुनवाई के दौरान पीयूडीआर ने न्यायालय से मॉनिटरिंग कमिटी को पूनर्जीवित करने की गुजारिश की ताकि निर्माण स्थलों पर मज़दूरों की वास्तविक स्थिति की जाँच की जा सके। लेकिन सुनवाई के दौरान हमारी इस माँग का सरकारी एजेंसियों की तरफ से खुलकर विरोध किया गया। इन एजेंसियों के वकीलों ने दलील दी कि चुँकि न्यायालय पहले ही रजिस्ट्रेशन कैंपों में डीएलएसए के प्रतिनिधियों को उपस्थित होने का निर्देश दे चुका है एवं वे इसमें सहयोग करते आ रहे हैं इसलिए इसकी जाँच भी डीएलएसए से ही करवाई जाय। अंततः न्यायालय ने उनके तर्कों को स्वीकार करते हुए डीएलएसए की सेक्रेट्री को निर्देश दिया कि वे अपनी टीम के साथ निर्माण स्थलों पर लगाए जाने वाले रजिस्ट्रेशन कैंपों का दौरा करे तथा मज़दूरों की स्थिति का जायजा ले। इनके साथ याचिकाकर्त्ता संगठनों के प्रतिनिधियों को भी निर्माण स्थलों पर बिना रोक–टोक जाने की अनुमति दी तथा दिल्ली पुलिस के डीसीपी को भी इस संदर्भ में निर्देश जारी किए।

1 सितंबर 2010 को डीएलएसए की मेम्बर सेक्रेट्री ने 6 पृष्ठों की अपनी रिपोर्ट न्यायालय को सौंपी, जो निर्माण स्थल पर मज़दूरों के दयनीय हालात तथा श्रम विभाग के ढुलमुल रवैये को उजागर करती हैं। इसके अनुसार 24 अगस्त को दिल्ली एयरपोर्ट साइट पर रजिस्ट्रेशन के लिए कैंप का स्थान निर्धारित हुआ था। यहाँ डीएलएसए एवं पीयूडीआर के प्रतिनिधि नियत समय पर पहुँच गए, लेकिन श्रम विभाग की तरफ से कोई अधिकारी नहीं आए जिसकी वजह से कोई रजिस्ट्रेशन नहीं हो पाया। 25 अगस्त को अक्षरधाम के पास खेल–गाँव स्थल पर तथा 26 अगस्त को जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में भी श्रम विभाग का रवैया निराशाजनक ही रहा। जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में मज़दूरों को देने के लिए श्रम–विभाग तकरीबन 200 से ज़्यादा पास–बुक लाया था, लेकिन इसे लेने के लिए कोई भी मज़दूर मौजूद नहीं था। न्यायालय का आदेश होने तथा प्रतिवादी के वकील की तरफ से पूरा आश्वासन मिलने के बावजूद डीएलएसए की टीम को निर्माण स्थल के अंदर प्रवेश करने में समस्याओं का सामना करना पड़ा। इसपर श्रम विभाग के अधिकारी ने तर्क दिया कि चुँकि सुरक्षा की ज़िम्मेवारी सीआईएसएफ को दी जा चुकी है इसीलिए उन्हें भी अंदर जाने में समस्याएँ होती हैं। (डीएलएसए रिपोर्ट, पृ 2).

सुरक्षा मानकों के संदर्भ में रिपोर्ट में शिवाजी स्टेडियम तथा जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम के हालात के बारे में बताया गया है। इसके अनुसार ऊँचाई पर काम करने वाले मज़दूरों के लिए किसी भी तरह के सुरक्षा जाल या बेरिकेट नहीं थे। अंडर ग्राउंड पार्किंग के निर्माण के लिए एक गहरा गड्ढा खोदा गया था लेकिन इसके किनारे में कोई रोक नहीं लगायी गयी थी। गड्ढे में लोग इधर–उधर काम कर रहे थे तथा जगह–जगह कीचड़ भरी हुई थी। ऊँचाई पर काम करने वाले मज़दूरों के पास सुरक्षा बेल्ट नहीं थीं। केवल कुछ मज़दूरों के पास जूते एवं

हेलमेट थे बाकि सब इनके बिना ही काम कर रहे थे। बारिश के समय में वेल्डिंग का काम करने वाले मज़दूरों तक के पास दस्ताने नहीं थे तथा गीली ज़मीन पर बिजली के तार इधर उधर फैले हुए थे। अंदर काम करने वाले मज़दूरों के पास रोशनी का भी प्रबंध ठीक से नहीं था। (डीएलएसए रिपोर्ट, पृ. 2–3).

जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में कुछ मज़दूर ढ़लान वाली ऊँची छत पर महज एक रस्सी को पकड़कर काम कर रहे थे तथा उनकी सुरक्षा का कोई प्रबंध नहीं था। (डीएलएसए रिपोर्ट, पृ. 3).

डीएलएसए की इस रिपोर्ट में मज़दूरों के रहन–सहन के हालात के बारे में भी एक निराशाजनक तस्वीर उभरकर सामने आती है। इसमें बताया गया है कि कैसे मज़दूरों को एक छत एवं भोजन के लिए संघर्ष करना पड़ रहा था। रिपोर्ट के अनुसार कुछ मज़दूरों ने सरोजिनी नगर/सफदरजंग फ्लायओवर के पास रहने की बात की, तो कुछ ने निजामुद्दीन कॉलोनी की एक झुग्गी में रहने की बात बतायी। निर्माण स्थलों पर शौचालयों की भी समुचित व्यवस्था नहीं थी। शिवाजी स्टेडियम में मज़दूरों के विश्राम एवं भोजन करने के लिए भी जगह नहीं था एवं उन्हें खुले में ही खाना खाना होता था जहाँ बारिश होने पर उनका खाना खराब हो सकता था। इसमें दूसरे राज्यों से आए मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी नहीं देने की भी बात सामने आई। किसी को सप्ताह में 300 रूपये मिलते थे तो किसी को एक दिन के 120 रूपये दिए जा रहे थे।(डीएलएसए रिपोर्ट, पृ. 4).

साइट पर कोई रजिस्टर नहीं दिखाया गया जिसमें मज़दूरों के हस्ताक्षर हों। 16–19 वर्ष के कुछ लड़के भी काम कर रहे थे तथा किसी भी मज़दूर को रजिस्ट्रेशन के बारे में जानकारी नहीं थी। (डीएलएसए रिपोर्ट, पृ. 4).

यद्यपि इस रिपोर्ट में बताया गया है कि समय की पाबंदी की वजह से सभी निर्माण स्थलों का निरीक्षण नहीं किया जा सका लेकिन फिर भी कुछ स्थलों के बारे में इसमें जानकारी दी गई है। इस रिपोर्ट से भी यह साफ है कि न्यायालय के निर्देशों के बाद भी श्रम विभाग ने कुछ भी नहीं किया तथा मज़दूरों के हालात जस के तस ही बने रहे।

तो वहाँ कैंप जैसा कुछ भी नहीं चल रहा था। सिर्फ श्रम विभाग के दो अधिकारी आए थे जो सड़क के किनारे खड़े थे। विभाग ने न तो मज़दूरों को पहले से कैंप के बारे में कोई जानकारी दी थी और न ही किसी तरह के पर्चे ही बँटवाए थे। पीयूडीआर की टीम को यह देखकर काफी हैरत हुई कि वहाँ रजिस्ट्रेशन प्रक्रिया में मदद करने के लिए कोई ठेकेदार या केन्द्रीय श्रम विभाग का कोई अफसर भी मौजूद नहीं था। ऐसे हालात में इन अधिकारियों ने वहाँ काम कर रहे 1–2 मज़दूरों से उनके फोटो और पहचान पत्र आदि के बारे में पूछना शुरू किया। जाहिर सी बात है कि कोई भी मज़दूर काम करने के लिए जाते समय अपने साथ फोटो या पहचान पत्र लेकर नहीं जाता है। इसलिए उनसे इसके बारे में पूछना ही एक मूर्खतापूर्ण कार्य था। आदर्श रूप में, मज़दूरों को 6–7 दिन पहले इस पूरी प्रक्रिया की जानकारी दे दी जानी चाहिए थी ताकि वे रजिस्ट्रेशन के लिए ज़रूरी जन्म प्रमाण–पत्र, पहचान–पत्र, फोटो जैसे दस्तावेज़ जुटा सकें। इतना ही नहीं, आमतौर पर मज़दूरों के पास उनका जन्म प्रमाण–पत्र नहीं होता है। इसलिए यह श्रम विभाग की ज़िम्मेदारी होती है कि वह मज़दूरों के जन्म प्रमाण–पत्र की जगह शपथ–पत्र की व्यवस्था करें। उन्हें रजिस्ट्रेशन कैंप में उनके फोटो के लिए भी फोटोग्राफर की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि रजिस्ट्रेशन की प्रक्रिया पूरी हो सके। लेकिन श्रम विभाग से आए अधिकारियों ने ऐसी कोई व्यवस्था नहीं की थी। जिससे इस दिन किसी भी मज़दूर का पंजीकरण नहीं हो सका। दूसरे निर्माण–स्थलों पर भी श्रम–विभाग के इस ढुलमुल रवैये के कारण गिनती के ही रजिस्ट्रेशन हो सके।

श्रम विभाग द्वारा की जा रही खाना–पूर्ति की शिकायत करने के बाद न्यायालय ने 7 जुलाई 2010 दिल्ली लीगल सर्विस अथोरिटी (डीएलएसए) को निर्देश दिया कि वे अपने तीन अधिवक्ताओं को नामित करें जो रजिस्ट्रेशन कैंप का निरीक्षण कर सकें। इसके बाद कुछ स्थलों पर कैंप का आयोजन किया गया लेकिन इसमें भी कई तरह की खामियाँ रहीं। कुछ घंटों के लिए ही कैंप लगाए जाते

इरोज़ ग्रुप में मज़दूरों का शोषण

16 अप्रैल 2010 को पीयूडीआर के एक जाँच दल ने इरोज़ निर्माण स्थल पर दौरा किया। अखबारों में इस निर्माण स्थल पर बहुत सारी अनियमितताओं की खबरें आ रही थीं। जाँच ने वहाँ निर्माण मज़दूरों, ठेकेदार और इरोज़ ग्रुप के प्रतिनिधियों और मयूर विहार पुलिस स्टेशन में पुलिस से मुलाकात की। इस निर्माण स्थल पर तकरीबन तीन साल पहले काम शुरू हुआ था। मेसर्स चावला टेक्नो कंस्ट्रक्ट लिमिटेड कंपनी यहाँ प्रमुख नियोक्ता थी। जाँच दल के दौरे के समय तक मुख्य काम तकरीबन पूरा हो चुका था। ठेकेदार के अनुसार उन्होंने सौ से भी कम मज़दूरों को काम पर लगाया था। बाकी मज़दूरों को इरोज़ रिसोर्ट्स होटल्स लिमिटेड द्वारा काम पर लगाया गया था। लेकिन मज़दूरों के अनुसार, इस निर्माण स्थल पर तकरीबन 2000 मज़दूर काम कर रहे थे। अधिकांश मज़दूर पश्चिम बंगाल, बिहार, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र से आए थे। इन्हें 13 मज़दूर ठेकेदारों (जमादारों) द्वारा काम पर रखावाया गया था। ये मज़दूर निर्माण स्थल के नज़दीक लोहे की चादरों से बनी झुग्गियों में रहते थे। तापमान सामान्य से भी ज़्यादा होने पर ऐसे घरों में रहना बहुत मुश्किल हो जाता है, पर ये मज़दूर पूरी गर्मियों के दौरान इन्हीं झुग्गियों में रहे।

मजदूरों से यह वादा किया गया था कि उन्हें नए वित्तीय वर्ष की शुरूआत से 199 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से मज़दूरी दी जाएगी। बहरहाल, मज़दूरों को एक महीने से लेकर तीन महीने तक वेतन का भुगतान नहीं किया गया था। इस दौरान उन्हें अपना गुज़ारा चलाने के लिए हर आठ दिनों में 300 रूपये भत्ता दिया जाता था। मज़दूरी न मिलने से उत्तेजित मज़दूरों ने इरोज़ के प्रबंधन को यह चेतावनी दी कि यदि उनके पूरे वेतन का भुगतान नहीं किया गया तो वे 14 अप्रैल 2010 को हड़ताल पर चले जाएँगे।

14 अप्रैल की सुबह मज़दूर निर्माण स्थल के गेट के बाहर एकत्रित हुए और उन्होंने काम पर जाने से इंकार कर दिया। उन्हें यह उम्मीद थी की इरोज़ ग्रुप के उच्च अधिकारी आएँगे और उन्हें पूरा वेतन मिलने का आश्वासन देंगे। लेकिन निर्माण स्थल पर मौजूद इरोज़ प्रबंधन ने यह कहते हुए पुलिस को बुला लिया कि वहाँ कानून और व्यवस्था की समस्या खड़ी हो गई है। मयूर विहार पुलिस स्टेशन के थाना प्रभारी सहित 100 से भी ज़्यादा पुलिसकर्मी निर्माण स्थल पर पहुँच गए। मज़दूर निर्माण स्थल के बाहर चुपचाप खड़े थे। इसके बावजूद पुलिस ने बिना कोई चेतावनी दिए लाठियाँ चलाते हुए उन्हें वहाँ से खदेड़ना शुरू कर दिया। जब कुछ मज़दूरों को चोट लग गई तो दूसरे मज़दूर भाग कर सुरक्षित स्थानों पर चले गए और वहाँ से पुलिस पर पत्थर फेंकने लगे। पुलिस का दावा है कि इससे 4 पुलिसवालों को चोटें लगीं।

यह बहुत ही शर्मनाक है कि निर्माण स्थल के प्रबंधन ने मज़दूरों के रहने की समुचित व्यवस्था नहीं की, उनकी मजूदरी भी समय पर नहीं दी और फिर पुलिस की मदद से उनकी आवाज़ दबाने में सफल हुए।

थे तथा इसमें भी श्रम विभाग के अधिकारी 1–2 घंटे देरी से पहुँचते थे। कई बार तो ऐसा भी हुआ कि बतायी गयी जगह पर श्रम विभाग के अधिकारी पहुँचे ही नहीं। फिर भी डीएलएसए के प्रतिनिधियों के आने के बाद कुछ निर्माण स्थलों पर मज़दूरों के पंजीकरण करवाए गए। लेकिन इन्हें उसी समय पास–बुक नहीं दी गईं। कहा गया कि पास–बुक 5–6 दिन बाद उनके कॉन्ट्रेक्टरों को दे दी जाएगीं, जो इन्हें मज़दूरों को दे देंगे। लेकिन फॉर्म भरने वाले सभी मज़दूरों को पास–बुक नहीं मिल पायी। इसकी वजह यह थी कि जिस समय इन मज़दूरों का पंजीकरण करवाया गया तब तक काफी देर हो चुकी थी क्योंकि तब तक खेल की तारीख नजदीक आ चुकी थी तथा मज़दूर अपना काम खत्म करके वापस लौटने लगे थे। कई मामलों में तो नियोक्ताओं ने उनकी पास–बुक अपने पास ही रख लीं। इस तरह से न्यायालय के आदेश के बाद तकनीकि तौर पर तो बहुत से मज़दूरों का पंजीकरण हुआ लेकिन पास–बुक नहीं मिलने के कारण न तो उनके पास कोई सबूत रहा और न ही भविष्य में वे इसका फायदा उठाने के लायक ही रहे।

4. श्रम कानूनों का क्रियान्वन असंभव क्यों है

श्रम कानूनों के क्रियान्वयन संबंधित मशीनरी की खामियाँ

संविधान के अंतर्गत श्रम को समवर्ती सूची में रखा गया है। इसका अर्थ है कि इस क्षेत्र में कानून बनाने का अधिकार केंद्र और राज्य दोनों ही सरकारों को है। देश में श्रम से संबंधित 260 कानून हैं। लेकिन हमारा अनुभव बताता है कि कानूनों की प्रकृति और इन्हें लागू करने के तरीकों में ही ऐसी खामियाँ हैं, जिनकी वजह से असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों, खासकर निर्माण मज़दूरों, के संबंध में इन्हें लागू करना लगभग नामुमकिन हो जाता है।

ये कानून मज़दूरों को समय पर न्यूनतम मज़दूरी देने, रोजगार एवं मज़दूरी के भुगतान का विवरण रखने, उनके रहन सहन के हालात एवं सुरक्षा मानकों की उपयुक्त व्यवस्था आदि द्वारा ठेकेदारों के ऊपर कई तरह के अंकुश लगाते हैं। कानून में यह भी प्रावधान है कि श्रम कानूनों को ठीक ढंग से लागू करने की ज़िम्मेदारी मुख्य नियोक्ता की होगी। लेकिन इसमें जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए उचित व्यवस्था नहीं बनाई गई है। दूसरी तरफ पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप (पीपीपी) के आने के बाद मुख्य नियोक्ता को लेकर पहले से भी अधिक अस्पष्टता आ गई है। मिसाल के तौर पर कॉमनवेल्थ गेम्स विलेज में दिल्ली विकास प्राधिकरण और एमआर–एमजीएफ संयुक्त रूप से मुख्य नियोक्ता थे। हमारा अनुभव बताता है कि ऐस मामलों में संयुक्त ज़िम्मेदारी होने के कारण असल में किसी की भी ज़िम्मेदारी नहीं रह जाती। छोटी परियोजनाओं में तो मुख्य नियोक्ता को यह भी पता नहीं होता है कि बतौर मुख्य नियोक्ता श्रम कानूनों के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने ज़िम्मेदारी उसी की है। जहाँ निर्माण सरकारी एजेंसियों के जरिए करवाया जाता है, वहाँ संस्थानों के मुखिया यह कह कर बच निकलते हैं कि परियोजना का क्रियान्वयन करने वाली एजेंसी ही मुख्य नियोक्ता है। निर्माण कार्य में लगी नियोक्ताओं की लंबी श्रृंखला – यानी प्रमुख नियोक्ता, सरकारी एजेंसी (जैसे पीडब्लूडी, एमसीडी आदि), कॉन्ट्रेक्टर कंपनियों, ठेकेदार, उप ठेकेदार आदि की मौजूदगी, यह सुनिश्चित कर देती है कि गलती से कभी श्रम कानूनों के संबंध में कोई सवाल या शिकायत हो तो वे एक दूसरे पर इसकी ज़िम्मेदारी डाल कर बच निकलें।

1982 में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के बावजूद किसी भी सरकारी एजेंसी ने श्रम कानूनों के उल्लंघन को रोकने के लिए मशीनरी विकसित करने की ज़रूरत नहीं समझी। प्रदेशों की तो बात ही क्या, राजधानी दिल्ली में भी इस संबंध में कोई कदम नहीं उठाये गये। नतीजा यह है कि केवल श्रम विभाग ही ऐसी एकमात्र संस्था है जो इन कानूनों को लागू करने के लिए ज़िम्मेदार है। इस काम को यह विभाग अपने इंस्पैक्टर्स के जरिए करता है। श्रम विभाग कर्मचारियों की कमी को अक्सर अपनी ज़िम्मेदारी ठीक से ना निभा पाने के कारण के रूप में पेश करता है। इसमें कुछ हद तक सच्चाई भी है। असल में श्रम विभाग में पर्याप्त संख्या में कर्मचारियों को न रखा जाना भी राज्य की श्रम कानूनों को लागू करने की राजनीतिक इच्छा शक्ति के अभाव का परिचायक है। लेकिन दूसरी ओर यह भी सच है कि श्रम विभाग में मज़दूरों के हितों के प्रति संवेदनशीलता का बेहद अभाव है। यदि श्रम कानूनों का उल्लंघन दिखता है तो यह श्रम विभाग की कार्यप्रणाली पर ही सवाल खड़ा करेगा। इसलिए इससे बचने के लिए श्रम विभाग श्रम कानूनों के उल्लंघन को कम से कम करके दिखाने का या उन पर पर्दा डालने का भी प्रयास करता है। कॉमनवेल्थ गेम्स विलेज से संबंधित काम को लेकर श्रम विभाग ने बार बार यही कहा कि श्रम कानूनों का उल्लंघन केवल कुछ एक मामलों में ही हुआ है जिसे ठीक कर लिया गया है। पीयूडीआर मज़दूरों के व्यापक शोषण किए जाने के तथ्यों को पेश किए जाने पर भी श्रम विभाग इससे इंकार करता रहा। इसी तरह मॉनिटरिंग कमिटी के दौरे के समय भी श्रम विभाग की ओर से श्रम कानूनों के उल्लंघनों पर पर्दा डालने का पूरा प्रयास किया गया।

बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट की भी कई सीमाएँ हैं। उदाहरण के लिए इस ऐक्ट के तहत मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट या पहले दर्ज़े के न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी भी किस्म के उल्लंघन के मामले में दखल दे सकते हैं। लेकिन ऐसा वे किसी स्वयंसेवी संस्था के डायरेक्टर या चीफ इंस्पेक्टर या

भ्रष्टाचार का नमूना एवं पैसों का खेल

मार्च में मॉनिटरिंग कमिटी द्वारा न्यायालय में रिपोर्ट सौंपे जाने के बाद उच्च न्यायालय ने मज़दूरों की मज़दूरी एवं सुरक्षा को सुनिश्चित करने हेतु कई आदेश जारी किए। लेकिन अप्रैल से सितम्बर तक विभिन्न निर्माण स्थलों पर की गई जाँच–पड़ताल में हमने पाया कि न्यायालय के आदेश के बावजूद किसी भी मज़दूर को उसकी न्यूनतम मज़दूरी नहीं दी जा रही थी। अकुशल मज़दूरों को 110–130 रूपये रोज़ना दिया जा रहा था, जबकि इनकी न्यूनतम मज़दूरी 203 रूपये प्रति दिन थी। कुछ निर्माण स्थलों पर उन्हें हर हफ्ते खर्च के लिए 300–400 रूपये दिए जा रहे थे और बाकी पैसा ठेकेदार अपने पास रख लेते थे। पीयूडीआर को विभिन्न निर्माण स्थलों यह स्थिति मिली। कानून द्वारा तय सीमा के अनुसार ओवरटाइम देने का तो सवाल ही नहीं उठता था। इनमें दिल्ली विश्वविद्यालय, शिवाजी स्टेडियम, आर.के. खन्ना स्टेडियम तथा इसके नजदीक चल रहे सड़क सौंदर्यीकरण, जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम और राष्ट्रमंडल खेल गाँव शामिल थे।

हमने मज़दूरों को पूरी मज़दूरी नहीं देने से ठेकेदार को होनेवाले मुनाफे का आंकलन किया तो चौंकाने वाले तथ्य सामने आए। इस समय दिल्ली में अकुशल मज़दूरों के लिए न्यूनतम मज़दूरी 203 रूपये प्रतिदिन, अर्द्ध–कुशल के लिए 225 रूपये प्रतिदिन और कुशल मज़दूरों के लिए 248 रूपया प्रतिदिन था। जबकि इस समय ठेकेदार अकुशल मज़दूरों को 110–130 रूपये तथा अर्द्ध–कुशल और कुशल मज़दूरों को 130–170 रूपये दे रहे थे। अप्रैल माह में न्यायालय में दायर विभिन्न शपथ–पत्रों से इस परियोजना में तकरीबन 40 हजार मज़दूरों के संलग्न होने की बात सामने आयी। पीयूडीआर द्वारा की गई गणना के अनुसार ठेकदार हर मज़दूर की मज़दूरी का तकरीबन 75–85 रूपये अपने पास रख रहे थे। 40 हजार मज़दूरों पर इस हिसाब से आंकलन करने पर यह नहीं कुछ तो कम से कम 30–34 लाख रूपये प्रतिदिन तथा 9–10 करोड़ रूपये प्रतिमाह होता है।

इस समय लगभग सभी मज़दूर 10 घंटे काम कर रहे थे। इस अतिरिक्त 2 घंटे के ओवरटाइम के लिए कम से कम 100 रूपये प्रतिदिन की मज़दूरी होनी चाहिए थी जो मज़दूरों को नहीं दी जा रही थी। इस हिसाब से 40 हजार मज़दूरों का आंकलन करने पर कम से कम 40 लाख रूपये प्रतिदिन तथा 12 करोड़ रूपये प्रतिमाह होता है।

जो मज़दूर ओवरटाइम कर रहे थे उन्हें सामान्य दर से ही ओवरटाइम के पैसे मिल रहे थे। यानि जिन मज़दूरों का वेतन 203 रूपया था उन्हें 12 घंटे के काम के लिए 406 रूपये मिलने चाहिए थे लेकिन इन मज़दूरों को 170–180 रूपये ही दिए जा रहे थे। यानि हर मज़दूर के ओवरटाइम से तकरीबन 200 रूपये का मुनाफा। यह सच है कि सभी मज़दूर ओवरटाइम नहीं कर रहे थे लेकिन यदि हम माने लें कि 6000 मज़दूर भी ओवरटाइम कर रहे थे, जो कि काम के बोझ को देखते हुए बहुत ही कम हैं, तो ठेकेदार ओवर टाइम न देकर हर रोज 12 लाख रूपये तथा महीने में 3 करोड़ 60 लाख रूपये बचा रहे थे।

मज़दूरों को साप्ताहिक छुट्टी भी नहीं मिल रही थी और ये हफ्ते में सातों दिन सामान्य मज़दूरी पर ही काम कर रहे थे। कानून के प्रावधानों के अनुसार यदि वे साप्ताहिक छुट्टी के दिन भी काम करते हैं तो उन्हें 'ओवर टाइम' के हिसाब से ही पैसा मिलना चाहिए। इसका अर्थ है कि उन्हें न्यूनतम मज़दूरी से दुगना पैसे मिलना चाहिए। लेकिन इस दिन भी सामान्य मज़दूरी देकर ठेकेदार हर मज़दूर का तकरीबन 203 रूपये अपने पास रख लेते थे। 40 हजार मज़दूरों के हिसाब से एक दिन में यह रकम 80 लाख होती है। यदि महीने में 5 सप्ताहिक छुट्टियाँ हों तो इसका मतलब है कि ठेकेदार सातों दिन एक जैसी मज़दूरी देकर महीने में तकरीबन 4 करोड़ रूपये बचा रहे थे।

यदि इन सभी रकमों को इकट्ठा जोड़ा जाय तो यह राशि नहीं कुछ तो कम से कम 30 करोड़ रूपये प्रतिमाह होता

है। उल्लेखनीय है कि यह आंकलन 40 हजार मज़दूरों पर किए गए हैं जो अप्रैल–मई में सौंपे गए शपथ–पत्रों के आधार पर मज़दूरों की कुल संख्या है। नवंबर 2010 में न्यायालय में जमा किए गए शपथ–पत्रों में मज़दूरों की संख्या 88 हजार से भी अधिक बतायी गई है। इस हिसाब से ठेकेदारों द्वारा बचायी गई यह रकम सीधे दूनी, यानि नहीं कुछ तो कम से कम 60 करोड़ रूपये प्रतिमाह हो जाती है तथा एक साल के लिए हिसाब लगाने पर यह रकम कम से कम 720 करोड़ रूपये होता है। ये केवल मज़दूरी से बचाई गई रकम है। इसके अलावे मज़दूरों को मिलने वाले सुरक्षा मानकों जैसे जूते, हेलमेट, दस्ताने, सेफ्टी बेल्ट, रहन–सहन के बदतर हालात एवं स्वास्थ्य सुविधाओं की समुचित व्यवस्था नहीं करने से हुई बचत को इसमें नहीं जोड़ा गया है।

ठस प्रकार से मज़दूरों को उनकी नियत मज़दूरी से कम भूगतान करके कॉन्ट्रेक्टर कंपनी एवं ठेकेदार एक मुश्त रकम का गबन कर रहे थे। ये गरीब मज़दूरों की मज़दूरी से चुराई गई रकम है जिसका सत्यापन कॉन्ट्रेक्टरों द्वारा तैयार किए गए फर्जी कागजों को देखने से नहीं हो सकता है। इसका पता तो मज़दूरों से बात–चीत द्वारा ही चल सकता है जो अब खेल खत्म होने के बाद संभव नहीं है।

मज़दूरों के इन करोड़ों रूपयों के गबन को भ्रष्टाचार का नाम नहीं दिया गया और न ही इसे भ्रष्टाचार की जांच के दायरे में रखा गया है।

संबंधित मज़दूर यूनियन की शिकायत पर ही कर सकते हैं।

वैसे भी अगर गाहे–बगाहे कोई कानून के शिकंजे में आ भी जाए तो जुर्माना इतना कम होता है कि उससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के अंतर्गत श्रम कानूनों के उल्लंघन के लिए जुर्माना 500–2000 रूपयों के बीच है जो आज के समय में एक मज़ाक है। और केवल इतना जुर्माना लगाने के लिए श्रम विभाग को एक लंबी प्रक्रिया करनी पड़ती है। 1982 के एशियाड केस में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय सुनाते हुए कहा था कि–

''...देश के मजिस्ट्रेट एवं न्यायाधीशों को श्रम कानूनों के उल्लंघनों से सख्ती से निपटना चाहिए। जब भी उनके सामने श्रम कानूनों का उल्लंघन साबित होता है तो उन्हें गुनहगार नियोक्ता को उपयुक्त सजा देनी चाहिए। श्रम कानून मज़दूरों के बेहतरी के लिए बनाये गए हैं और नियोक्ताओं को इनके उल्लंघन के लिए मामूली सा जुर्माना देकर, जिसे देने में उन्हें कोई परेशानी नहीं होती, छूटने नहीं देना चाहिए क्योंकि श्रम कानूनों के उल्लंघन से वे जो लाभ बना रहे होंगे वह उस जुर्माने की तुलना में बहुत अधिक होंगे। अगर श्रम कानूनों के उल्लंघन के लिए इतना मामूली जुर्माना रहेगा तो श्रम कानूनों का लागू हो पाना असंभव हो जाएगा और ये कानून किसी काम के नहीं रहेंगे। वे केवल कागजी बाघ बनकर रह जाएँगे जिनके पास न तो दाँत होंगे और न ही पंजे।'' (पीयूडीआर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया, 1982).

इस ऐतिहासिक फैसले के 28 साल बाद भी इतने अहम मुद्दे पर सरकार ने ध्यान देने की जरूरत नहीं समझी। इतने सालों में हुए रूपये के अवमूल्यन के बाद भी जुर्माने की राशि नहीं बदली गई जबकि इस समय में इसी अवमूल्यन के कारण लाभ कई गुना बढ़ चुका है। पीयूडीआर के एक आंकलन के अनुसार राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण के दौरान मज़दूरों को उनकी नियत मज़दूरी का भुगतान नहीं करके कॉन्ट्रेक्टर कंपनियाँ एवं ठेकेदार एक साल में कम से कम 720 करोड़ रूपये बचा रहे थे। आश्चर्य की बात है कि भ्रष्टाचार के इस पहलू के ऊपर किसी का भी ध्यान नहीं है। नतीजा वही है जो कि सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश जस्टिस भगवती ने कहा था, श्रम कानूनों का क्रियान्वयन महज एक सपना है। 2010 में एक बार फिर उच्च न्यायालय द्वारा गठित कमिटी ने यह सिफारिश की है कि श्रम कानूनों के उल्लंघन की सजा को ऐसा बनाया जाए ताकि इस पर अंकुश लग सके। पर कोर्ट ने इस सिफारिश के संबंध में अभी तक सरकार को कोई निर्देश नहीं दिए हैं।

श्रम विभाग के अलावा बाकी एजेंसियाँ भी अपनी भूमिकाएँ गंभीरता से नहीं लेतीं। उदाहरण के लिए दुर्घटना में चोट लगने या मौत होने पर, नियोक्ता की यह ज़िम्मेदारी बनती है कि वह डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट को इसकी इत्तला दे।

डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट को फिर हादसे की जाँच करनी होती है। लेकिन नियोक्ता अपनी इस ज़िम्मेवारी को ठीक से नहीं निभाते हैं। उदाहरण के लिए, संसद के मानसून सत्र के दौरान राज्य सभा में ये खुलासा किया गया कि राष्ट्रमंडल खेलों के विभिन्न कार्यस्थलों पर 42 मज़दूर दुर्घटनाओ में मारे गए। अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद पीयूडीआर को इन मामलों के बारे में जानकारी नहीं मिल पाई और न ही यह जानकारी कोर्ट तक पहुँच पाई। अगर कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का अनुसरण किया गया होता तो जानकारी आसानी से उपलब्ध होनी चाहिए थी।

सुधार के लिए उठाए गए कदमों का मकसद निर्माण मज़दूरों को कुछ हद तक आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा प्रदान कराना था। परंतु यह सब कागजों तक सीमित होकर रह गया है। बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट के तहत निर्माण मज़दूरों के लिए एक वेलफेयर फंड का गठन किया गया। इसका मकसद असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रदान करवाना था। प्रोजेक्ट के शुरू होने से पहले नियोक्ता को कानूनन एक नियत राशि इसमें जमा करवानी होती है। दिल्ली में इसे प्रोजेक्ट के कुल लागत का एक प्रतिशत तय किया गया है। कम्पट्रोलर एण्ड ऑडिटर जनरल ऑफ इंडिया (सीएजी) की पिछले कुछ वर्षों की रिपोर्ट इस बात का खुलासा करती हैं कि डीडीए द्वारा इन प्रावधानों का उल्लंघन किया गया है। इनमें बताया गया है कि या तो इसने कई कंपनियों से ये राशि जमा ही नहीं करवाई या फिर एक बार जमा करने के बाद वापिस कर दी। यह कानून का सरासर उल्लंघन है। इकट्ठे हुए फंड का इस्तेमाल ना करने की भी खबरें हैं। जैसा कि ऊपर श्रम विभाग द्वारा दिए गए विवरणों से स्पष्ट है, आज भी दिल्ली में कुल 4–5 लाख निर्माण मज़दूरों में से केवल 40 हजार ही पंजीकृत हैं। इतना ही नहीं, इनमें से कितने पंजीकरण जिंदा हैं तथा कितने मज़दूरों को पंजीकरण के बाद पास–बुक मिल पायी हैं, स्पष्ट नहीं है। इस वजह से जो मज़दूर पंजीकृत हैं उनमें भी न के बराबर मज़दूरों को ही इसका कोई फायदा पहुँचा है। ऐसा कहा जाता है कि पंजीकरण की प्रक्रिया बेहद आसान है परंतु ऐसा लगता है कि रजिस्ट्रेशन के लिए कार्यविधिक ज़रूरतें और साथ में नियोक्ता या वेल्फेयर बोर्ड की इच्छा शक्ति का अभाव इसे संभव बनाने की जगह बाधक ही बनाते हैं।

यह साफ है कि असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों के अधिकारों की रक्षा के लिए कोई प्रभावकारी मशीनरी मौजूद नहीं है। असल में एक ऐसे प्रशासन से, जो ठेकेदारी प्रथा को बढ़ावा देता हो, असंगठित मज़दूरों के हितों की रक्षा की अपेक्षा करना ही बेमानी है।

संगठित संघर्ष की कमी

चेतना की कमी, आर्थिक और सामाजिक असुरक्षा, काम की अनियमित–प्रकृति तथा ठेकेदार द्वारा बहुत समय तक एक कार्यस्थल पर ना टिकने देने के कारण, निर्माण मज़दूरों के लिए यह असंभव हो जाता है कि वे अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ने के लिए खुद को संगठित कर पाएँ। यही वजह है कि इतने बड़े स्तर पर राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण कार्यों या मैट्रो परियोजना में कार्यस्थलों पर केवल इक्के–दुक्के विरोध प्रदर्शन ही देखने को मिले। व्यक्तिगत स्तर पर मज़दूर अपने अधिकारों का उल्लंघन होने पर आपराधिक केस दायर कर सकते हैं। परंतु ऐसा करने की सूरत में उन्हें अपने रोज़गार से हाथ धोना पड़ सकता है या फिर हिंसा का सामना करना पड़ सकता है। अतः यह विकल्प भी उनके लिए बेकार साबित होता है।

श्रम कानूनों के उल्लंघन की एक बड़ी वजह इसके निर्माण स्थलों मज़दूर यूनियनों, मानवाधिकार संगठनों तथा अन्य नागरिक अधिकार संगठनों को जाने की अनुमति नहीं देना भी है। आतंकवाद का ताना–बाना खड़ा करके यहाँ किसी को भी प्रवेश तक करने की अनुमति नहीं दी जाती है और इस चारदिवारी के अंदर मज़दूरों का खुलकर शोषण किया जाता है। हम मानते हैं कि आज सुरक्षा का मुद्दा एक अहम मुद्दा है। लेकिन जिस निर्माण स्थल पर हजारों मज़दूर महज एक मामूली से गेट–पास को दिखाकर अंदर जा सकते हैं और काम कर सकते हैं वहाँ नागरिक अधिकार संगठनों के लोगों के प्रवेश को रोकने की क्या वजह है? इतना ही नहीं, निर्माण स्थल पर तो सुरक्षा की बात समझ में भी आती है, लेकिन मज़दूरों के कैंप में अगर किसी को जाने से रोका जाता है तो इसके पीछे केवल आतंकवाद ही कारण नहीं है। हद तो तब हो जाती है जब श्रम विभाग के अधिकारी भी यह दलील देते हैं कि उन्हें भी निर्माण स्थलों के अंदर जाने में समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

अनियमित मज़दूरों के संगठित न हो पाने का एक कारण यह भी होता है कि बड़ी मज़दूर यूनियन भी इन्हें लेकर तुलनातकम रूप उदासीन होती हैं। राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण कार्यों के दौरान तमाम बड़ी मजूदर यूनियनों की भूमिका भी असंतोषजनक रही। उन्होंने कभी भी खुद से पहल कर असरदार ढंग से मज़दूरों से संबंधित कोई मुद्दा नहीं उठाया और न ही कभी मज़दूरों को संगठित करने की कोई कोशिश की। मज़दूरों के अधिकारों के उल्लंघन के संदर्भ में पीयूडीआर के साथ–साथ दूसरे संगठनों की रिपोर्ट आने के बाद भी मुख्य–धारा की मज़दूर यूनियनें चुप्पी साधे रहीं। यहाँ तक कि उच्च न्यायालय द्वारा गठित मॉनिटरिंग कमेटी की रिपोर्ट में भी श्रम–कानूनों के खुलेआम उल्लंघन की बातें सामने आयीं। लेकिन प्रमुख ट्रेड यूनियनों की तरफ से इसकी कोई निंदा नहीं की गई। ऐसा लगता है कि ये यूनियनें मान चुकी हैं कि श्रम कानूनों का उल्लंघन एक सामान्य और स्वीकार्य बात है।

जानकारी का अभाव और संचार माध्यमों की निष्क्रियता

राष्ट्रमंडल खेलों के अनुभव ने यह साफ कर दिया है कि संचार माध्यमों को मज़दूरों या उनके अधिकारों से खास सरोकार नहीं है। राष्ट्रमंडल खेलों और मैट्रो का निर्माण कार्य सालों से इस शहर में बहुत ही बड़े स्तर पर चल रहा था और इनमें लगातार श्रम कानूनों का उल्लंघन हो रहा था, परन्तु संचार माध्यमों में इन परियोजनाओं में काम कर रहे मज़दूरों की खबरें केवल तभी आतीं थीं जब कहीं किसी दुर्घटना में मज़दूर की मौत हो जाती थी। मज़दूरों के शोषण के संबंध में संचार माध्यम केवल तभी नींद से जागे जब उच्च न्यायायल में याचिका दर्ज़ हुई। संचार माध्यमों की उदासीनता मज़दूरों के शोषण के ज़ारी रह पाने में अपना योगदान देती है।

निष्कर्ष

राष्ट्रमंडल खेलों को राष्ट्रीय गौरव के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। परन्तु इन खेलों के लिए हुए निर्माण को अंजाम देने वाले मज़दूरों के साथ जो कुछ हुआ वह असल में लोकतंत्र और कानून के शासन की वास्तिवकता का पर्दाफाश करने के लिए काफ़ी था। देश की राजधानी में सरकार की नाक के नीचे व्यापक स्तर पर मज़दूरों का शोषण होता रहा तथा श्रमिक कानूनों की खिल्ली उड़ती रही लेकिन सरकार मूकदर्शक बनकर तमाशा देखती रही। केन्द्र सरकार और दिल्ली सरकार – दोनों में से किसी मे भी इन कमज़ोर लोगों को पूंजीवादी ताकतों के शोषण से बचाने की राजनीतिक इच्छा शक्ति नहीं दिखाई दी। खेलों के कुछ समय पहले और उनके बाद उजागर हुए खेलों से संबंधित भ्रष्टाचार के मामलों से यह साफ होता है कि इस तरह के बड़े आयोजन सभी संबंधित सरकारी और गैर सरकारी एजेंसियों के लिए अनाप शनाप पैसा बनाने का एक ज़रिया होते हैं, ऐसे में यह उम्मीद करना कि सरकारी एजेंसियाँ निर्माण कंपनियों को श्रम कानूनों का पालन करने के लिए बाध्य करेंगी एक दिवास्वप्न ही है। बल्कि इसके उलट इन सरकारी एजेंसियों की कंपनियों और ठेकेदारों के साथ मिलीभगत से भी इंकार नहीं किया जा सकता।

राष्ट्रमंडल खेलों के निर्माण मज़दूरों के मुद्दे के साथ हमारे अनुभव ने हमें सिखाया कि श्रम कानून असल में लागू किए जाने के लिए हैं ही नहीं।

– राष्ट्रमंडल खेलों की बड़ी बड़ी निर्माण परियोनाओं में सरकारी संस्थाएं जैसे डीडीए, सीपीडब्ल्यूडी, पीडब्ल्यूडी, एमसीडी, डीएमआरसी, डीआईएएल मुख्य नियोक्ता थीं। सरकारी संस्थानों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे आदर्श मुख्य नियोक्ता की तरह काम करें। श्रम कानूनों जैसे आईएमडब्ल्यू ऐक्ट और बीओसीडब्ल्यू ऐक्ट में यह साफतौर पर निहित है कि यह सुनिश्चित करने का दायित्व मुख्य नियोक्ता का है कि श्रम कानून लागू हों। परन्तु श्रम कानूनों को लागू करवाने से इन संस्थानों को कोई सरोकार नहीं है। इसलिए सरकारी परियोजनाओं में काम कर रहे मज़दूर भी खुले आम फुटपाथ पर झुग्गियाँ बनाकर रहते रहे, उन्हें निर्धारित घंटों से ज़्यादा घंटों और निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी से कम पर काम करना पड़ा, उन्हें उनके सभी अधिकारों जैसे ओवर टाइम', साप्ताहिक छुट्टी, मेडिकल

सुविधाएँ, सुरक्षा उपायों और रहने की सुविधाओं की खुले आम अवहेलना होती रही। इससे फर्क नहीं पड़ता कि ये सभी श्रम कानूनों का उल्लंघन है। इससे भी फर्क नहीं पड़ता कि सर्वोच्च न्यायालय ने न्यूनतम वेतन से कम पर काम करवाए जाने को 1982 में बेगार व भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 और अनुच्छेद 23 यानी क्रमशः जीवन के अधिकार और शोषण के विरूद्ध अधिकार का उल्लंघन कहा था। इससे भी फर्क नहीं पड़ता कि यह एक फौजदारी अपराध है।

– इसके बाद श्रम कानूनों के क्रियान्वन की ज़िम्मेवारी कार्यपालिका के घटक श्रम विभाग और श्रम मंत्रालय की है। पर इन्होंने अपने स्तर पर इन खेलों के दौरान यह सुनिश्चित करने की भी कोशिश की ठेकेदार कंपनियाँ या निचले दर्ज़ के ठेकेदार मज़दूरों को न्यूनतम वेतन तक दे रहे हैं या नहीं, अन्य सुविधाओं की बात तो बहुत दूर है। विभाग को जनवादी संगठनों के बार बार इस ओर ध्यान दिलाने से भी कोई फर्क नहीं पड़ा कि सभी निर्माण स्थलों पर श्रम कानूनों का उल्लंघन हो रहा है। श्रम विभाग को इससे भी फर्क नहीं पड़ा कि न्यायालय की कमिटी की रिपोर्ट द्वारा इन तथ्यों की पुष्टि हो गई और प्रचार माध्यमों ने इन तथ्यों को बड़े स्तर पर सार्वजनिक कर दिया। श्रम विभाग को इससे भी फर्क नहीं पड़ता कि देश के सर्वोच्च न्यायालय ने 1982 में यह आदेश दिया था कि एक ऐसी मशीनरी विकसित की जानी चाहिए जिससे श्रम कानूनों का उल्लंघन रोका जा सके। आज तक इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाए गए हैं और श्रम विभाग कर्मचारियों का रोना रो कर नहीं अपनी ज़िम्मेवारी से हाथ झाड़ लेता है और इस तरह मज़दूरों का शोषण हमारे 'कानून के शासन' की वास्तविकता बन गया है।

– राष्ट्रमंडल खेलों के संदर्भ में उच्च न्यायालय से भी मज़दूरों को निराशा ही हाथ लगी। न्यायालय की कमिटी की रिपोर्ट मार्च में आ गई थी और न्यायालय के सामने यह खुलासा हो गया था कि निर्माण स्थलों पर मज़दूर किस तरह शोषित हो रहे हैं। इस पर भी न्यायालय की तरफ से एक भी ऐसा स्पष्ट और सख्त आदेश नहीं आया जिससे मज़दूरों को कोई राहत मिल सके, और सरकारी अधिकारियों और कंपनियों को श्रम कानूनों का पालन करने के लिए मजबूर होना पड़े। खेलों के लिए निर्माण का काम सितम्बर के अंत तक चलता रहा, परन्तु उच्च न्यायालय ऐसा कोई आदेश नहीं दिया जिससे कम से कम मार्च के बाद से श्रम कानून सही ढंग से लागू हो सकें। यह न्यायालय की बहुत बड़ी असफलता है कि जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम के पैदल पार पथ की दुर्घटना में घायल 27 मज़दूरों को न्यायालय के आदेश के अलावा जनहित याचिका से कुछ भी हासिल नहीं हो सका।

– कानूनों का उल्लंघन को 'कानून के शासन' में अपराध माना जाता है। कमिटी की रिपोर्ट द्वारा उच्च न्यायालय के सामने ठेकेदारों, ठेकेदार कंपनियों और सरकारी संस्थानों द्वारा इतने बड़े स्तर पर किए जा रहे अपराध उजागर हुए, परन्तु न्यायालय एक भी ऐसा आदेश नहीं दे पाया जिससे दोषी ठेकेदारों और सरकारी अधिकारियों के खिलाफ काई भी कार्यवाही हो पाती।

इस तरह कार्यपालिका और न्यायपालिका दोनों ही हज़ारों मज़दूरों को उनके अधिकार दिलाने में पूरी तरह से असफल रहे हैं। इस असफलता का नतीजा है कि ठेकेदारों और कंपनियों द्वारा करोड़ों रूपयों का यह गबन भ्रष्टाचार का मामला नहीं बना पाया और न तो श्रम कानूनों के उल्लंघन का अपराध 'अपराध' के रूप में पहचाना जा सका और न इनके अपराधी 'अपराधी' कहलाए। श्रमिक और श्रम कानून इतने महत्वहीन हैं कि जनहित याचिका में हुए खुलासों के किसी भी अधिकारी या राजनीतिज्ञ का एक भी बयान नहीं आया – न तो श्रम कानूनों के उल्लंघन की सफाई देते हुए और न ही यह कहते हुए कि वे इस संबंध में कोई कार्यवाही करेंगे।

यहाँ यह नहीं भूलना चाहिए कि राष्ट्रमंडल खेलों के मज़दूरों के मुद्दे से जुड़े हमारे यह अनुभव समस्त असंगठित वर्ग के मजूदरों की स्थिति और सरकार के रवैये का ही प्रतिरूप हैं। हमारे सामने एक ऐसी स्थिति है जिसमें सरकार असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों के अधिकारों की सुरक्षा के संवैधानिक दायित्व के प्रति पूरी तरह उदासीन है, जब राज्य की संस्थाएँ अपने संवैधानिक दायित्वों को निभाने में पूरी तरह से नाकाम हो रही हैं। जब देश की सर्वोच्च अदालत के आदेशों को भी गंभीरता से नहीं लिया जा रहा है, जहाँ संबंधित अधिकारी अपने आपराधिक कामों के

मज़दूर ऐसे रहते थे

राष्ट्रमंडल खेल गांव में मज़दूर कैंप में तीन स्तरीय पलंग

नहाने की जगह!

प्रकाशक : सचिव, पीपल्स यूनियन फ़ॉर डैमोक्रैटिक राइट्स (पी.यू.डी.आर.)
मुद्रक : हिन्दुस्तान प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली 110032
प्रतियों के लिए : डॉ. मौशमी बासु, ए – 6/1, अदिति अपार्टमेंट्स, पॉकेट डी, जनकपुरी, नई दिल्ली 110058
सहयोग राशि : 10 रूपये
ई मेल : pudrdelhi@yahoo.com
वेबसाइट : www.pudr.org